All Subject to Patiala Jurisdiction.

साप्ताहिक कृषि समाचार-पत्र

मूल्य : 6/- रुपए

खेती संदेश

Postage Registered No. PB/PTA/0339/2025-2027

WEEKLY KHETI SANDESH

E-mail : khetisandesh2025@gmail.com

Chief Editor : Parminder Kaur • RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 • Issue Dt. 16-03-2026 • Vol.2 No.11 • H.O. : # 9-A, Ajit Nagar, Patiala-147001 (Pb.) • Mob. 90410-14575 • Page 12

एनडीआरआई) में तीन दिवसीय राष्ट्रीय डेयरी मेला एवं कृषि एक्सपो–2026 का आयोजन

दूध उत्पादन में भारत ने अमेरिका व चीन को भी पीछे छोड़ा - डॉ. राघवेंद्र भट्टा

भा.कृ.अनु.प.–राष्ट्रीय डेरी अनुसंधान संस्थान (एन.डी.आर.आई.) में तीन दिवसीय राष्ट्रीय डेयरी मेला एवं कृषि एक्सपो–2026 का आयोजन किया गया। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के उप महानिदेशक (पशु विज्ञान) डॉ. राघवेंद्र भट्टा ने मेले का उद्घाटन किया। उन्होंने पशुपालन क्षेत्र की उपलब्धियों और भविष्य के लक्ष्यों का खाका पेश किया। डॉ. राघवेंद्र भट्टा ने बताया कि भारत वर्तमान में 248 मिलियन टन दूध उत्पादन के साथ विश्व में प्रथम स्थान पर है, जो वैश्विक उत्पादन का एक चौथाई हिस्सा है। उन्होंने कहा कि भारत ने उत्पादन में अमेरिका, चीन और ब्राजील जैसे बड़े देशों को पछाड़ दिया है। डॉ. भट्टा ने भविष्य के रोडमैप पर चर्चा करते हुए कहा कि हमारा लक्ष्य वर्ष 2030 तक 300 मिलियन टन और वर्ष 2047 तक 600 मिलियन टन उत्पादन हासिल करना है। उन्होंने बताया कि उत्तर प्रदेश उत्पादन में देश का नेतृत्व कर रहा है, जिसके बाद राजस्थान, मध्य प्रदेश और महाराष्ट्र का स्थान आता है।

एन.डी.आर.आई. के निदेशक डॉ. धीर सिंह ने कार्यक्रम की अध्यक्षता करते हुए कहा कि देश में 7 से 8 करोड़ लोग आजीविका के लिए पशुपालन पर निर्भर हैं, जिनमें 17 प्रतिशत महिलाएं हैं। उन्होंने जानकारी दी कि संस्थान द्वारा हाल ही में विकसित 'कर्ण फ्रीज' गाय का पंजीकरण किया गया है। उन्होंने मेले को पशुपालकों के लिए ज्ञान का केंद्र बताते हुए कहा कि यहां पोषण, प्रसंस्करण और विस्तार की समस्त जानकारियां एक ही छत के नीचे उपलब्ध करवाई गईं। विशिष्ट अतिथि और महाराणा प्रताप बागवानी विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ. एस. के. मल्होत्रा ने बागवानी और डेयरी की समेकित खेती अपनाने का आह्वान किया। वहीं, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) डॉ. राजन शर्मा ने बताया कि मेले में एनडीआरआई के 16 और आईसीएआर के 8 संस्थानों सहित 70 वाणिज्यिक स्टॉल लगाए गए। इस अवसर पर एनबीएजीआर के निदेशक डॉ. एन.एच. मोहन सहित कई वैज्ञानिक और बड़ी संख्या में किसान मौजूद रहे। मेले में पशुपालक अपने 400 उतकृष्ट पशुओं के साथ पहुंचे थे।

गेहूं में बैंगनी रंग दिखने पर घबराएं नहीं

फफूंदनाशक छिड़काव की जरूरत नहीं - पीएयू विशेषज्ञ

पंजाब में गेहूं की फसल में बालियों पर बैंगनी रंग दिखाई देने को लेकर किसानों की बढ़ती चिंता के बीच पंजाब कृषि विश्वविद्यालय के विशेषज्ञों ने स्पष्ट किया है कि यह कोई रोग नही है। विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने किसानों को सलाह दी है कि इस स्थिति में फफूंदनाशक दवाओं का छिड़काव करने की आवश्यकता नहीं है।

विश्वविद्यालय के प्लांट पैथोलॉजी विभाग के प्रमुख डी. एस. भुट्टर ने बताया कि इस समय पंजाब के अधिकांश क्षेत्रों में गेहूं की फसल बालियां निकलने की अवस्था में है। हाल के दिनों में कई किसानों ने गेहूं की बालियों (ग्लूम्स) और डंठल (पेडुनकल) पर बैंगनी रंग दिखाई देने की शिकायत की है। कुछ किसानों ने बिना कृषि वैज्ञानिकों या विस्तार विशेषज्ञों से सलाह लिए ही फफूंदनाशक का छिड़काव भी कर दिया है।

डॉ. भुट्टर ने बताया कि इस समस्या को समझने के लिए विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने विभिन्न क्षेत्रों में विस्तृत सर्वेक्षण किया। जांच में पाया गया कि यह कोई बीमारी नहीं है, बल्कि केवल बालियों की बाहरी परत पर रंग परिवर्तन दिखाई देता है। इसके अंदर विकसित हो रहा गेहूं का दाना पूरी तरह स्वस्थ रहता है और उसमें किसी प्रकार का रंग परिवर्तन नहीं होता।

उन्होंने बताया कि ऐसी ही स्थिति वर्ष 2022 में भी देखने को

मिली थी, जब मार्च महीने में तापमान सामान्य से अधिक दर्ज किया गया था। वैज्ञानिकों के अनुसार यह रंग परिवर्तन संभवत: मेलानिन नामक पिगमेंट बनने के कारण होता है, जो कुछ लोकप्रिय गेहूं किस्मों की स्वाभाविक विशेषता हो सकती है।

विशेषज्ञों का कहना है कि फरवरी और मार्च के दौरान दिन और रात के तापमान में सामान्य से अधिक वृद्धि होने के कारण यह स्थिति और स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगती है। अलग-अलग गेहूं किस्मों में यह बैंगनी रंग अलग-अलग स्तर पर दिखाई देता है।

क्योंकि यह कोई रोग नहीं है, इसलिए इसके नियंत्रण के लिए फफूंदनाशक दवाओं के उपयोग की जरूरत नहीं है। वैज्ञानिकों ने किसानों को सलाह दी है कि वे अनावश्यक छिड़काव से बचें और फसल की देखभाल पर ध्यान दें।

पीएयू विशेषज्ञों के अनुसार किसानों को समय-समय पर जरूरत के अनुसार सिंचाई करनी चाहिए और गर्मी के प्रभाव को कम करने के लिए विश्वविद्यालय की सिफारिश के अनुसार पोटेशियम नाइट्रेट का छिड़काव किया जा सकता है। इससे फसल को तापमान के तनाव से बचाने में मदद मिलेगी और किसानों को बेहतर उत्पादन प्राप्त हो सकेगा।

बिहार में मीठी क्रांति की तैयारी - 144 प्रखंडों में शहद समितियां, किसानों को मिलेगा बेहतर दाम और बड़ा बाजार

बिहार में शहद उत्पादन करने वाले किसानों की आय बढ़ाने के लिए राज्य सरकार ने एक बड़ा और अहम कदम उठाया है। सहकारिता विभाग ने राज्य के 144 प्रखंडों में शहद उत्पादक और प्रसंस्करण समितियों का गठन किया है। इन समितियों के माध्यम से किसानों को संगठित कर शहद के उत्पादन, प्रसंस्करण और विपणन की मजबूत व्यवस्था तैयार की जा रही है। सरकार का उद्देश्य है कि शहद उत्पादक किसानों को उनकी उपज का बेहतर और उचित मूल्य मिल सके।

दरअसल, शहद उत्पादन करने वाले किसान अक्सर बाजार की कमी, ब्रांडिंग की कमजोर व्यवस्था और बिचौलियों के कारण अपनी उपज का सही दाम नहीं प्राप्त कर पाते है. नई व्यवस्था के तहत प्रखंड स्तर पर बनी समितियां किसानों को एक मंच पर लाकर सामूहिक रूप से काम करने का अवसर देंगी। इससे शहद के उत्पादन में वृद्धि होगी और किसानों को सीधे बड़े बाजारों तक पहुंच बनाने में मदद मिलेगी।

राज्य सरकार ने इस पहल

को और मजबूत बनाने के लिए बिहार राज्य शहद उत्पादक और प्रसंस्करण फेडरेशन का भी गठन किया है। यह फेडरेशन प्रखंड स्तर की सभी समितियों को एक साथ जोड़ने का काम करेगा। फेडरेशन के माध्यम से शहद की गुणवत्ता बनाए रखने, उसकी ब्रांडिंग करने और राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय बाजारों तक पहुंच बनाने की दिशा में काम किया जाएगा। इससे बिहार के शहद को एक अलग पहचान मिलने की उम्मीद है।

सरकार का मानना है कि संगठित तरीके से काम करने पर शहद उत्पादक किसानों की आय में उल्लेखनीय वृद्धि हो सकती है. फेडरेशन के जरिए शहद के संग्रहण, पैकेजिंग और विपणन की बेहतर व्यवस्था बनाई जाएगी. इससे किसानों को बिचौलियों पर निर्भर नहीं रहना पड़ेगा और वे सीधे बाजार से जुड़ सकेंगे।

शहद उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए राज्य सरकार ने विभिन्न विभागों के बीच समन्वय भी स्थापित किया है। कृषि विभाग, उद्योग विभाग और कॉम्फेड (सुधा) के बीच शहद उत्पादन और उसके विपणन को लेकर समेकित प्रयास करने पर सहमति बनी है। इस सहयोग के तहत किसानों को तकनीकी सहायता, आधुनिक उपकरण, प्रशिक्षण और बेहतर बाजार संपर्क उपलब्ध कराया जाएगा। इससे शहद उत्पादन की गुणवत्ता और मात्रा दोनों में सुधार होने की संभावना है।

बिहार का शहद अपनी खास पहचान और स्वाद के लिए जाना जाता है। राज्य के अलग-अलग क्षेत्रों में विभिन्न फसलों से तैयार होने वाला शहद काफी लोकप्रिय है। मुजफ्फरपुर, वैशाली और समस्तीपुर अपने बड़े-बड़े लीची के बागानों के लिए प्रसिद्ध हैं। इन क्षेत्रों में तैयार होने वाला लीची का शहद अपने अनोखे स्वाद और सुगंध के कारण बाजार में काफी मांग में रहता है।

इसके अलावा नालंदा और पटना जैसे जिलों में सरसों की खेती बड़े पैमाने पर होती है, जिससे सरसों का शहद भी बड़ी मात्रा में तैयार किया जाता है। वहीं औरंगाबाद और रोहतास क्षेत्रों में तिल के फूलों से बनने वाला तिल का शहद भी उत्पादित होता है। इन सभी किस्मों के शहद को बेहतर पहचान और बाजार दिलाने के लिए सरकार अब संगठित प्रयास कर रही है।

विशेषज्ञों का मानना है कि यदि यह योजना प्रभावी ढंग से लागू होती है तो बिहार में शहद उत्पादन के क्षेत्र में एक नई 'मीठी क्रांति' देखने को मिल सकती है। इससे न सिर्फ किसानों की आय बढ़ेगी बल्कि बिहार का शहद देश और दुनिया के बड़े बाजारों तक पहुंच सकेगा।

गर्मी की बेरहमी

'साइलेंट किलर' बन सकता है बढ़ता तापमान

ज्ञानेन्द्रा रावत

भीषण गर्मी से स्वास्थ्य पर गंभीर खतरे हो सकते हैं, जैसे अंगों की क्रियाशीलता बाधित होना, विकलांगता आदि। साथ ही हृदयघात भी हो सकता है। इसके अतिरिक्त, शिक्षा, कृषि, उत्पादकता व जीवन पर भी खतरा मंडरा रहा है। वैज्ञानिकों ने इसे 'साइलेंट किलर' की संज्ञा दी है।

दुनिया में बढ़ती गर्मी का खतरा लगातार बढ़ता जा रहा है। अनुमान है कि साल 2050 तक, दुनिया के लगभग 41 फीसदी लोग खतरनाक स्तर पर भीषण गर्मी का सामना करने को विवश होंगे। साल 2010 तक यह आंकड़ा महज 23 फीसदी था। यह स्थिति तब होगी जब दुनिया का औसत तापमान औद्योगिक युग से दो डिग्री सेल्सियस बढ़ जाएगा।

आक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी के अध्ययन में यह खुलासा हुआ है कि भारत, नाइजीरिया, इंडोनेशिया, पाकिस्तान, बांग्लादेश और फिलीपींस इससे सर्वाधिक प्रभावित होंगे। सच तो यह है कि भीषण गर्मी से स्वास्थ्य पर गंभीर खतरे हो सकते हैं, जैसे अंगों की क्रियाशीलता बाधित होना, विकलांगता, चक्कर, सिरदर्द आदि, साथ ही हृदयघात भी हो सकता है। इसके अतिरिक्त, शिक्षा, कृषि, उत्पादकता, जीवन और विस्थापन पर भी खतरा मंडरा रहा है। वैज्ञानिकों ने इसे 'साइलेंट किलर' की संज्ञा दी है।

वर्ष 2026 की शुरुआत में ही गर्मी, सूखा और आग की घटनाओं ने चेतावनी दे दी है। यह बदलाव भारत जैसे विकासशील देशों के लिए एक गंभीर संकेत है, क्योंकि भारत की विशाल आबादी और पहले से ही गर्म जलवायु इसे और अधिक संवेदनशील बना देती है। इसका मुख्य कारण 1950 के बाद से लू या हीटवेव की आवृत्ति और तीव्रता में वृद्धि है। कमजोर बुनियादी ढांचे के कारण विकासशील देशों में आर्थिक रूप से कमजोर लोग गर्मी और स्वास्थ्य जोखिमों के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं।

इंटरनेशनल लेबर आर्गेनाइजेशन के अनुसार, भारत में गर्मी के कारण उत्पादकता में भारी कमी आएगी और जीडीपी में गिरावट होने की आशंका है। वैज्ञानिकों का कहना है कि अमेरिका, चीन और भारत में 23 से 30 अतिरिक्त दिन गर्मी का सामना करना पड़ेगा।

दुनिया के शोधों ने यह साबित कर दिया है कि भीषण गर्मी से प्रभावित देशों की सूची में भारत सबसे ऊपर है। भारत के आधे से अधिक जिले भीषण गर्मी का सामना करेंगे। यह निष्कर्ष 'नेचर सस्टेनेबिलिटी' जर्नल में प्रकाशित रिपोर्ट और 'हाउ एक्सट्रीम हीट इज इम्पैक्टिंग इंडिया – असेसमेंट डिस्ट्रिक्ट लेवल हीट रिस्क-2025' के नाम से सीईईडब्ल्यू के अध्ययन में सामने आया है। इस अध्ययन

में सबसे गर्म रातों, यानी 'हॉट नाइट्स', की तादाद में वृद्धि का उल्लेख किया गया है, जिससे हृदय रोग और उससे जुड़ी बीमारियों का खतरा बढ़ जाता है। हीट स्ट्रोक और हृदयाघात की संभावना भी अधिक रहती है।

वैज्ञानिकों के अनुसार, गर्मी का यह असर 1.5 डिग्री की सीमा पार करने से पहले ही दिखने लगेगा। अगले 5 वर्षों में लाखों घरों और दफ्तरों को कूलिंग सिस्टम की जरूरत में बेतहाशा बढ़ोतरी होगी। इसके परिणामस्वरूप, जहां ऊर्जा की मांग बढ़ेगी, वहीं कार्बन उत्सर्जन में भी इजाफा होगा।

गौरतलब है कि आज हम गर्मी के बढ़ते प्रभाव पर चर्चा करते हुए पर्यावरण में वृक्षों की महत्ता को नकार रहे हैं। दुख की बात यह है कि विकास के नाम पर हम हर साल लाखों हरे-भरे पेड़ों की बलि दे रहे हैं। यह सिलसिला पूरे देश में बेरोकटोक जारी है, और सरकार मौन है। राजस्थान में ग्रीन एनर्जी के नाम पर हजारों-लाखों खेजड़ी के पेड़ काटे जा रहे हैं। महाराजा गंगा सिंह विश्वविद्यालय के पर्यावरण विज्ञान विभाग के विभागाध्यक्ष के अनुसार, खेजड़ी की कटाई के कारण इस क्षेत्र का तापमान 7 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ गया है।

सीईईडब्ल्यू के अनुसार, देश में गर्मी के सबसे अधिक जोखिम वाले राज्यों में दिल्ली, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, आंध्र प्रदेश, गोवा, केरल, राजस्थान, गुजरात, कर्नाटक और तमिलनाडु शामिल हैं। देश के 417 जिले उच्च जोखिम की श्रेणी में हैं, जबकि 201 जिले मध्यम जोखिम का सामना कर रहे हैं। अब उत्तर भारत के शुष्क क्षेत्रों में भी तटीय इलाकों की उमस बढ़ रही है और सिंधु और गांगेय क्षेत्रों में पिछले दशक के मुकाबले आर्द्रता में 10 फीसदी की वृद्धि हो चुकी है। दिल्ली, कानपुर, वाराणसी, जयपुर जैसे शहरों में आर्द्रता का स्तर 40-50 फीसदी तक पहुंच चुका है।

चिंताजनक पहलू यह है कि बढ़ती गर्मी का खतरा सिर्फ शहरी क्षेत्रों तक सीमित नहीं है, बल्कि उत्तर प्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र और केरल जैसे ग्रामीण इलाके भी इससे प्रभावित हो रहे हैं। खुले आकाश के नीचे काम करने वाले खेतिहर मजदूरों पर इसका सबसे बुरा असर पड़ता है। यूएनईएससीएपी का कहना है कि इन मजदूरों में हीट स्ट्रेस, डिहाइड्रेशन और गर्मी से संबंधित बीमारियां अधिक होती हैं, क्योंकि छाया, पानी और आराम की कमी स्थिति को और गंभीर बना देती है। उन्हें समय पर इलाज भी नहीं मिल पाता।

संयुक्त राष्ट्र ने जोर दिया है कि बढ़ती गर्मी से बचाव के लिए तुरंत ठोस कदम उठाने की आवश्यकता है। इसके लिए मौसम और जलवायु जोखिम की सटीक जानकारी को निर्णय प्रणालियों और अर्ली वार्निंग सिस्टम में शामिल करना होगा। साथ ही, विभिन्न क्षेत्रों के बीच बेहतर समन्वय और इस दिशा में सार्वजनिक निवेश को बढ़ावा देना जरूरी है। यह महज एक चुनौती नहीं, बल्कि भविष्य की सुरक्षा का सवाल भी है।

लेखक पर्यावरणविद् है।

केन्द्र और पंजाब की एजेंसी के बीच किसान

मक्का खरीद पर पंजाब सरकार ने खींचे कदम, पहले मक्की खरीद का बनाया प्लान फिर पीछे हटे

पंजाब में भूजल स्तर को बचाने के लिए सरकार पिछले 15 सालों से मक्के की खेती को बढ़ावा देने के दावे तो कर रही है, लेकिन जब फसल खरीद की बारी आती है, तो केन्द्र की एजेंसियों से मिलकर काम का

सरसों खरीद से हरियाणा ने 19 करोड़ रुपए कमाए, पंजाब से धान-गेहूं के अलावा खरीद नहीं

प्रयास नहीं होता। ताज़ा मामला को-ऑपरेटिव विभाग का है, जहां केन्द्र सरकार की एजेंसी नेशनल कोआपरेटिव कंज्यूमर फेडरेशन ऑफ इंडिया (एन.सी.सी.एफ.) की ओर से मक्का खरीदने की सहमति के बावजूद पंजाब की स्टेट एजेंसी मार्कफेड ने जिम्मेदारी लेने से इनकार कर दिया।

मार्कफेड ने करीब चार दिन से एक सप्ताह तक होने वाले खर्च की जिम्मेदारी लेने से इनकार कर दिया, जबकि एन.सी.सी.एफ. के पास कुल फसल का 30 फीसदी तक किसी भी राज्य से खरीदने का अधिकार रहता है। जहां पंजाब हिचकिचा रहा है, वहीं पड़ोस राज्य हरियाणा मिसाल पेश कर रहा है। हरियाणा पिछले दो सालों से एन.सी.सी.एफ. के जरिए सूरजमुखी व सरसों की खरीद कर रहा है। इसके बदले में हरियाणा को केन्द्र से 2 प्रतिशत कमीशन के रूप में लगभग 20 करोड़ रुपए का लाभ मिला है। खास बात यह है कि इस खरीद में स्टाफ और ऑब्जर्वर से लेकर तमाम खर्च और जिम्मेदारी केन्द्रीय एजेंसी एन.सी.सी.एफ. की रहती है। दो दिन पहले एक बार फिर केन्द्रीय एजेंसी एन.सी.सी.एफ. की रहती है। दो दिन पहले एक बार फिर केन्द्रीय एजेंसी ने एग्रीकल्चर डिपार्टमेंट के अधिकारियों से मक्का या सरसों की खरीद को लेकर मीटिंग की है और उन्हें इसकी संभावना तलाशने को कहा है। पंजाब में पठानकोट, संगरूर, बठिंडा, जालंधर, कपूरथला और गुरदासपुर में मक्की का सबसे ज्यादा एरिया है।

एनसीसीएफ ने कहा था – उठाएंगे मक्का खरीद का सारा खर्च, पंजाब की एजेंसियों को मिलेगा 2 प्रतिशत कमीशन

बीते साल मक्की का करीब 95 हज़ार एकड़ रकबा रहा। इसमें से ज्यादातर मक्की डिजिटलरी को देने की योजना थी। इस बीच एन.सी.सी.एफ. से भी बात की गई कि यदि किसी वजह से खरीद नहीं होती है, तो किसानों का नुकसान न हो। एन.सी.सी.एफ. ने इसे सहर्ष स्वीकार किया और कहा कि पंजाब इस बारे में प्रोसेस शुरू करे। वह हरियाणा से हर साल सरसों की खरीद कर रहे हैं और मक्का भी खरीदा जा सकता है। वह न सिर्फ उपभोक्ता मंत्रालय को विभिन्न राज्यों के लिए खरीद करके देते हैं, बल्कि खरीद के बाद ओपन मार्केट में बेचने व एक्सपोर्ट का काम भी रहता है। इस बारे में तीन मीटिंग हुई। एन.सी.सी.एफ. या केन्द्रीय एजेंसियां स्टेट एजेंसी के साथ मिल कर ही खरीद करती हैं। किसानों से खरीद के बाद 48 घंटे में पैसा देना होता है ओर केन्द्र से ये रकम स्टेट एजेंसी को चार सेलेकर सात दिन के अंदर मिल जाती है। इस पूरे प्रक्रिया का खर्च केन्द्रीय एजेंसी ही वहन करती है। खरीद में सहयोग के लिए स्टेट एजेंसी को दो फीसदी कमीशन मिलता है। जैसे कि हरियाणा की एजेंसीज को सरसों के लिए 19 करोड़ रुपए से अधिक और सूरजमुखी के लिए 64 लाख रुपए से अधिक की रकम कमीशन के तौर पर मिली।

गेहूं की फसल में होने वाली बीमारियां एवं उनका प्रबंधन

भारत देश में गेहूं उत्पादन का प्रमुख स्थान है। गेहूं की खेती लगभग देश के सभी राज्यों में की जाती हैं। हम गेहूं की पैदावार को रोगरोधी किस्मों के चुनाव, संतुलित खादों व पानी के प्रयोग से बढ़ा सकते हैं। हानिकारक कीटों तथा बीमारियों के कारण 5–10 प्रतिशत उपज की हानि होती है और बीजों की गुणवत्ता भी खराब हो जाती है। इस लेख के माध्यम से हम गेहूं में होने वाले मुख्य रोग व उनकी रोकथाम के उपायों से किसानों को अवगत करवाना चाहते हैं ताकि किसान समय रहते अपनी फसल को नुकसान से बचा सकें।

गेहूं की बीमारियां एवं रोकथाम इस प्रकार हैं

1. भूरा या पत्तों का रतुआ : पत्तियों व पत्तियों के डंठलों पर इस रोग से नारंगी रंग के गोल

धब्बे हो जाते हैं, जो बाद में गर्मी बढ़ने के कारण काले हो जाते हैं।

रोकथाम :

* रोगरोधी किस्मों का चुनाव करें।

* जब बीमारी कहीं-कहीं नज़र आए, तब 800 ग्राम प्रति एकड़ मैकोज़ेब को प्रति एकड़ की दर से पानी में मिलाकर पहला छिड़काव करें। 2 या 3 छिड़काव 10 से 15 दिन के अंतराल पर करें।

2. पीला या धारीदार रतुआ : पत्तों पर कतरों में पीले रंग के छोटे-छोटे धब्बे बन जाते हैं। ये धब्बे पत्तियों के डंठलों पर भी हो जाते हैं। रोगी पत्तियां सूख जाती हैं और गर्मी बढ़ने पर धब्बों का रंग काला हो जाता है।

रोकथाम :

* रोगरोधी किस्मों का चुनाव करें।

* 200 मिलीलीटर टिल्ट प्रति एकड़ की दर से 200 लीटर पानी

में मिला कर छिड़काव करें।

3. खुली कांगियारी : प्रदेश के सभी भागों व सभी किस्मों में यह रोग पाया जाता है। गेहूं की बालियां काले पाऊडर के रुप में बदल जाती है। रोगी पौधों में बालियां निकलने से पहले सबसे ऊपरी पत्ती पीली हो जाती है।

रोकथाम :

धूप उपचार : मई जून में धूप वाले दिन बीज को 4 घंटे तक पानी में भिगो दें, इसके बाद पतली परत के रुप में पक्के फर्श पर फैला दें।

दवा उपचार : 2 ग्राम बाविस्टिन प्रति किलोग्राम बीज की दर से सूखा उपचार करके ही बुवाई करें।

* रोगी पौधों की बालियों को सावधानीपूर्वक निकाल कर जला दें।

4. करनाल बंट : प्रदेश में नमी वाले क्षेत्रों में यह रोग अधिक होता है। इस रोग से दानों में काले रंग का पाऊडर बन जाता है और इससे सड़ी मछली की गंध आती है। कुछ दानों में व किन्ही-किन्ही बालियों में इस बीमारी का प्रकोप होता है।

रोकथाम :

* रोगरोधी किस्मों का चुनाव करें।

* रोगरोधी किस्मों की रोग ग्रसित खेतों में बुवाई न करें।

* 2 ग्राम थाइरम प्रति किलोग्राम बीजों की दर से बीज का सूखा उपचार करें।

5. पत्तियों की कांगियारी : यह रोग शुष्क क्षेत्रों में होता है। इस रोग से पत्तों पर काली लम्बी धारियां नसों के साथ-साथ हो जाती हैं, जो बाद में फट जाती है और काला चूर्ण सा बन जाता है।

रोकथाम :

* रोगी पौधों को नष्ट कर दें।

* रोगरोधी किस्मों का चुनाव करें।

* 2 ग्राम वीटावैक्स या बाविस्टिन 1 ग्राम प्रति किलो बीज की दर से सूखा उपचार करके ही बुवाई करें।

6. काला सिरा रोग : इस रोग से दानों के अंकुरण वाली जगह के पास वाले स्थान गहरा भूरा व काले रंग का हो जाता है।

रोकथाम :

* 800 ग्राम मैंकोज़ेब प्रति एकड़ की दर से 10-15 दिन के अंतर पर फसल पर फूल आने से पकने तक छिड़काव करें।

7. चूर्णी रोग : यह रोग नमी व सिंचित क्षेत्रों में अधिक होता है। रोग से पत्तियों पर सफेद चूर्ण सा बन जाता है। इस रोग का अधिक प्रकोप होने के कारण बालियां भी रोग ग्रसित हो जाती है।

रोकथाम : * रोगरोधी किस्मों का चुनाव करें।

* 800-1000 ग्राम घुलनशील गंधक का 160-200 लीटर पानी में मिला कर प्रति एकड़ की दर से छिड़काव करें।

No. 1
RURAL WEEKLY

Now Think Before Advertising
KHETI DUNIYAN RETAINS
LEADERSHIP
IN
READERSHIP

KHETI DUNIYAN
VOICE OF THE FARMERS

KD COMPLEX, GAUSHALA ROAD, NEAR SHER-E-PUNJAB MARKET, PATIALA-147001 (PB.) INDIA
Mob. 90410-14575
khetiduniyan1983@gmail.com

खेती संदेश

KHETI SANDESH

मुख्य कार्यालय :
9–ए, अजीत नगर,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 98151–04575

कार्पोरेट कार्यालय :
के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड,
नजदीक शेरे पंजाब मार्केट,
पटियाला–147001
(पंजाब)
मो. 90410–14575

वर्ष : 02 अंक : 11
तिथि : 16-03-2026

सम्पादक
परमिंदर कौर

सम्पादकीय बोर्ड
डॉ. डी.डी. नारंग
डॉ. जे.एस. डाल
डॉ. आर.एम. फुलझेले

Editor : PARMINDER KAUR
Printer, Publisher and Owner of Weekly
'KHETI SANDESH' Printed at Drishti Printers,
Dasmesh Market, Near Sher-e-Punjab Market,
Gaushala Road, Patiala-147001 (Pb.) and
published from Kheti Sandesh, House No. 9-A, Ajit Nagar,
Patiala-147001 (Pb.). E-mail : khetisandesh2025@gmail.com
Mob. 90410-14575, RNI No.PBBIL/25/A0210

पशुओं में फ्लोरोसिस

प्रकृति में कुछ ऐसे तत्व पाए जाते हैं, जो सूक्ष्म से अल्प मात्रा में स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण होते है और अगर उनका सेवन निर्धारित मात्रा से अधिक हो, तो गंभीर परिणाम हो सकते हैं। फ्लोराईड भी इसी श्रेणी में आता है। फ्लोरीन हेलोजन से संबंधित एक गैर-धातुत्मक असंतुलित तत्व हैं, जो आमतौर पर एक पीले रंग की विषाक्त ज्वलनशील गैस है। फ्लोराईड फ्लोरीन का सरलतम आयन है। इसके लवण और खनिज महत्वपूर्ण औद्योगिक रसायन है।

फ्लोराईड आयन पृथ्वी पर कई खनिजों में पाए जाते है, विशेष रूप से फ्लोराईड, टोपाज, एपेटाईट; और रॉकफास्फेट, फास्फेटिक पिंड और फॉस्फॉराईट (इनमें सभी में फ्लोराईड की काफी सघनता है)। फ्लोराईड रंग हीन एवं स्वाद में कड़वा होता हैं। यह सूक्ष्म मात्रा में दांतों के इनेमल की सुरक्षा के लिए आवश्यक है वहीं इसका अत्यधिक सेवन बीमारी का कारण भी बन जाता है। जमीन से निकाला गया ऐसा पानी जिसमें प्रति लीटर 1.5 मिलीग्राम (मि. ग्रा.) से भी ज्यादा फ्लोराईड है का लंबे समय तक निर्धारित से अधिक मात्रा में सेवन से 'फ्लोरोसिस' होता है। भारत में पीने के पानी का मुख्य स्त्रोत भूजल है। यह भूजल गांव की 85 प्रतिशत जल की आवश्यकता को पूरी करता है। सिंचाई के लिए भी यह जल आवश्यक है। ग्रामीण जनसंख्या, जो पेयजल के एकमात्र स्त्रोत मुख्यत: गहरे खुदे हैण्डपंपों पर निर्भर करती है, उन पर सर्वाधिक बुरा असर पड़ा है। भोजन के फ्लोराईड का स्तर मिट्टी की प्रकृति और सिंचाई के लिए उपयोग किए गए पानी की गुणवत्ता पर निर्भर करता है और इस प्रकार गांव से गांव तक और शहर से शहर तक भिन्न होता है।

फ्लोरोसिस को गुजरात में वाह, मध्यप्रदेश में गेनू वालगम, राजस्थान में बंका पट्टी और उत्तर प्रदेश में लुंज-पुंज के नाम से पुकारा जाता है। फ्लोरोसिस किसी एक स्थान की समस्या नही है। यह कई राज्यों में और विभिन्न पारिस्थितिकीय क्षेत्रों तक फैली हुई है-थार मरूस्थल, गंगा तट के मैदानी इलाके और दक्षिणी पठार तक। इसके फैलाव में हर इलाका बारिश, मिट्टी की किस्म, भूजल पुनर्भरण व्यवस्था, मौसमी दशा और भूजल विज्ञान के मायने से अनूठा है। फ्लोरोसिस रोग का फैलाव देश के बड़े भू-भाग में हो चुका है और 19 राज्य इसकी चपेट में हैं। हरियाणा के 14 जिलों में भूजल में फ्लोराईड की मात्रा निर्धारित मात्रा से अधिक हैं। इनमें से मुख्य प्रभावित जिले भिवानी, फरीदाबाद, गुड़गांव, झज्जर, जींद, कैथल, महेन्द्रगढ, रेवाड़ी, रोहतक, सिरसा एवं पानीपत है। हरियाणा के सेमि एरिड हिस्से के भूजल में फ्लोराईड की अधिकता पाई जाती है। इस बीमारी से मुख्यतया गाय, भैंस, बकरी, भेड़, ऊंट प्रभावित होते हैं।

1. गहरे खुदे हैण्डपंपों

पर निर्भर पेयजल में फ्लोरोईड की मात्रा का ज्यादा होना।

2. भूजल में फ्लोराईड की बढ़ती मात्रा।

3. मृदा में मिश्रित रासायनिक खाद और कारखानों से निकले दूषित पानी का भूजल व मृदा में मिलना।

4. सिंचाई के पानी से फ्लोराईड का मिट्टी में बहाव व मिलना जिसके फलस्वरूप फसलों में फ्लोराईड की मात्रा का बढ़ना।

5. पशुओं के चारे में खाद्य पूरक खनिज मिश्रण आवश्यकता से अधिक मात्रा में मिलाना।

इन सबके निरंतर सेवन से फ्लोराईड पशुओं के शरीर में हड्डियों में प्रवेश कर जाता है और विकृति पैदा करता है।

पेय जल जिसमें फ्लोराईड 2-3 पी.पी.एम से ज्यादा है, उसका निरंतर सेवन करने से फ्लोरोसिस होने का खतरा रहता है। इस बीमारी की वजह से मुख्य व्यवसाय, यानि कृषि का काम बाधित हो गया है। फ्लोराईड युक्त पानी जमीन और फसल दोनों के लिए बुरा है। अहमदाबाद स्थित आगा खां रूरल स्पोर्ट प्रोग्राम के 'रमन पटेल' कहते हैं। कि फ्लोराईड प्रभावित गांवों से लोग पशु भी नहीं खरीदना चाहते हैं।

भूजल में फ्लोराईड की सघनता :- राजीव गांधी राष्ट्रीय पेयजल मिशन (आर.जी.एन.डी.डब्ल्यू.एम.) की रिपोर्ट के मुताबिक, भारतीय प्रायद्वीप के शिलांत में फ्लोराईड उत्पन्न करने वाले कई खनिज मौजूद हैं। जब शिलान्त छीजता है तो एक ऐसी प्राकृतिक रासायनिक प्रक्रिया चलती है, जिसमें चट्टान में धीरे-धीरे मिट्टी जमने लगती है- फ्लोराईड ऐसे में पानी और मिट्टी में रिसने लगता हैं। इसका रिसाव कई बातों पर निर्भर करता है। पानी का रासायनिक संयोजन; पानी में फ्लोराईड खनिजों की मौजूदगी और उस तक पहुंच; और स्त्रोत खनिज तथा पानी के बीच संपर्क का समय। मिसाल के तौर पर, गहरे कछारी भूजल भंडारण में भारी मात्रा में पानी होता है, जो कि भू-पटल निर्माण के समय में जमा होता है और इसी लिये तल में ज्यादा सघन फ्लोराईड हो सकता है। सख्त चट्टान के भूजल भण्डारण का पानी इनकी दरारों में जमा होता है, लेकिन इन चट्टानों के ज्यादा समीप होने से भी पानी में ज्यादा फ्लोराईड हो सकता है, खासकर तब जब इसका भूजल पुनर्भरण से ज्यादा बाहार खींचा जाता हो। मौसमी परिस्थितियों से भी भूजल भण्डारण में फ्लोरोईड की सीमा तय होती है। जैसे, वर्ष 2002 के एक पेपर 'फ्लोराईड इन शेलो एक्विफर इन राजगढ़ तहसील ऑफ चुरू डिस्ट्रिक, राजस्थान: एन एरिड इन्वायरन्मेंट'- जो कि रकेंट साइंस में छपा, में इस बात को उठाया गया कि भारी वाष्पीकरण वाले शुष्क मौसम और बहुत ही कम प्राकृतिक पुनर्भरण के कारण हो सकता है कि इन (चुरू जिले) क्षेत्र के भूजल में फ्लोराईड की ज्यादा सान्द्रता बनी हो।

बीमारी की वजह और लक्षण :- फ्लोराईड पानी के जरिए शरीर में आता है। 96-99 प्रतिशत हड्डियों में घुस जाता है, क्योंकि फ्लोराईड कैल्शियम फास्फेट के साथ बहुत जल्दी घुलती है। फ्लोरोसिस दो प्रकार की होती है : स्केलेटल फ्लोरोसिस और नान-स्केलेटल फ्लोरोसिस।

स्केलेटल फ्लोरोसिस :- दांतों के फ्लोरोसिस से दांतों का रंग प्रभावित होता है और वो काले हो जाते है। हड्डी के फ्लोरोसिस से हड्डियों में हमेशा के लिए विकृति हो सकती है।

नान-स्केलेटल फ्लोरोसिस से पेट और दिमाग की बीमारियां हो सकती है। फ्लोरोसिस के प्रभाव शरीर पर कई जगह देखे जा सकते है- गला, घुटने, कंधे, हार्थो और पर के जोड़ों पर। पाचन तन्त्र को भी यह कई तरीके से प्रभावित करता है, जैसे पेट में दर्द, दस्त, कब्ज। दिमाग पर इसके असर के लक्षण है- बहुत ज्यादा प्यास लगना और बार-बार पेशाब लगना। पर फ्लोरोसिस की बीमारी का पता जल्द नहीं लगता है। इसका एक कारण यह है कि उसके लक्षण अर्थराईटिस, स्पांडेलाईटिस वगैरह की तरह होते है। इसके बहुस्तरीय प्रभाव शरीर के ऊतकों, अंगों और विभिन्न प्रणालियों पर होते है और इसके कारण विभिन्न रोगों के लक्षण दिखाई देने लगते हैं, जैसे दांतों पर चितकबरापन, जठराव संबंधी रोगों की समस्या का होना तथा अस्थि संरचना में कड़ापन आदि।

फ्लोरोसिस से बचाव के उपाय :

1. पानी व मिट्टी की समय-समय पर जांच करायें।

2. फसलों में भी फ्लोराईड की मात्रा की जांच करायें।

3. खून और मूत्र की जांच करायें।

4. दांतों की जांच से भी फ्लोरोसिस का पता लगाया जा सकता है।

पेयजल में फ्लोराईड की मात्रा के नियंत्रण हेतु बहुत सी तकनीकियां खोजी गई है। इनमें नालागोंडा विधि तथा एक्टीवेटेड अल्युमिना क्षेत्रपिरिक्षित और विस्तृत रूप से अभ्यासित तकनीकियां है। विद्युतीय फ्लोराईड अपघटन (Electrolytic Defluoridation) एक नवीनतम पद्धति है। इस पद्धति में एल्युमिनियम धनाग्र (anode) का घुलन, सीधे विद्युत (Direct Current) से फ्लोराईड युक्त पानी में किया जाता है। प्रयोगशाला में पेयजल से 3-4 मि.ग्रा. / लीटर फ्लोरोईड की अधिक मात्रा दूर करने हेतु विद्युत (इलेक्टोलिटीक) पद्धति से बच क्रिया का अध्ययन किया गया तथा प्रयोगशाला अध्ययन पर आधारित विद्युतीय फ्लोराईड अपघटन संयंत्र डांगरगांव में लगाया गया। यह संयंत्र पानी से फ्लोराईड की मात्रा 3.4-4.5 मि.ग्राम/लीटर से 1.00 मि.ग्राम/लीटर तक लाता है। संतुलित आहार, विशेष रूप से कैल्शियम और विटामिन सी की प्रचुरता वाला आहार फ्लोराईड के दुष्प्रभावों से लड़ने का सबसे महत्वपूर्ण साधन है। पशुओं को फ्लोरोसिस प्रभावित क्षेत्र से दूर ले जाएं।

ग्रीष्मकालीन मूंग
उत्पादन की नूतन तकनीक

गंगाशरण सैनी, कृषि बागवानी सलाहकार,
5ई–9बी, बंगला प्लाट, फरीदाबाद–121001 (हरियाणा)

भारत में मूंग की खेती विशेष रूप से खरीफ में की जाती है, किन्तु अब प्रकाश एवं तापमान असहिष्णु किस्मों के विकास एवं सुनिश्चित सिंचाई साधनों की उपलब्धता के कारण इसकी खेती उत्तरी भारत में ग्रीष्म ऋतु एवं शरद् ऋतु में दक्षिण भारत में भी सम्भव है। ग्रीष्म ऋतु हेतु अधिक उत्पादकता संभावित अति शीघ्र पकने वाली, पीला व चितकबरा रोग अवरोधी किस्मों के विकास से मूंग का अधिकांश क्षेत्र ग्रीष्म ऋतु में स्थानान्तरित हो रहा है, जिससे दाल के उत्पादन में एवं भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि हो रही है।

मूंग भारत की लोकप्रिय एवं महत्वपूर्ण दलहनी फसल है। चने और अरहर के बाद मूंग का तीसरा स्थान है। यह कम समय में तैयार होने वाली फसल है। इसे दाल, हरी खाद, भूमि संरक्षण एवं चारे के रूप में उगाया जाता है। इसकी जड़ों में नाइट्रोजन स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु पाए जाते हैं, जो वायु में मंडलीय नाइट्रोजन को भूमि में एकत्रित करने की विशेष क्षमता रखते हैं, जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि हो जाती है। भारत में मूंग की खेती विशेष रूप से राजस्थान, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, ओड़ीसा, कर्नाटक, बिहार, मध्य प्रदेश व उत्तर प्रदेश में की जाती है।

भारत मे मूंग की खेती विशेष रूप से खरीफ में की जाती है, किन्तु अब प्रकाश एवं तापमान असहिष्णु किस्मों के विकास एवं सुनिश्चित सिंचाई साधनों की उपलब्धता के कारण इसकी खेती उत्तरी भारत में ग्रीष्म ऋतु एवं शरद् ऋतु में दक्षिण भारत में भी सम्भव है। ग्रीष्म ऋतु हेतु अधिक उत्पादकता संभावित अति शीघ्र पकने वाली, पीला व चितकबरा रोग अवरोधी किस्मों के विकास से मूंग का अधिकांश क्षेत्र ग्रीष्म ऋतु में स्थानान्तरित हो रहा है, जिससे दाल के उत्पादन में एवं भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि हो रही है।

ग्रीष्मकालीन मूंग उत्पादन की नूतन तकनीक का उल्लेख नीचे किया गया है :

जलवायु : मूंग की फसल के सफल उत्पादन हेतु गर्म जलवायु की आवश्यकता होती है। इसके लिए अधिक वर्षा हानिकारक है, परन्तु 100 सैंटीमीटर वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में मूंग की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। फसल को वृद्धिकाल में अधिक तापमान की ज़रुरत होती है। पौधों पर फलियां आते समय और उनके पकने के समय शुष्क मौसम एवं उच्च तापमान की आवश्यकता होती है।

भूमि और उसकी तैयारी : ग्रीष्मकालीन मूंग के सफल उत्पादन हेतु उचित जल निकास वाली रेतीली दोमट भूमि, जिसका पी.एच. मान 6–7 हो, जीवांश पदार्थ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हो, सर्वोत्तम मानी गई है। अधिक अम्लीय या अधिक क्षारीय भूमि इसके सफल उत्पादन में बाधक मानी गई है।

बुवाई से पूर्व खेत में पर्याप्त नमी का होना नितान्त आवश्यक है, इसलिए इसे बोने से पूर्व पलेवा करनी चाहिए। जब भूमि बुवाई योग्य हो जाए, तब 3–4 बार हैरो या कल्टीवेटर से जुताई करनी चाहिए, फिर पाटा लगा कर भूमि को समतल कर लेना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक : मूंग की फसल से अधिक पैदावार लेने हेतु भूमि में संतुलित मात्रा में खाद एवं उर्वरकों का उपयोग करना नितान्त आवश्यक है। अत: मृदा–जांच के उपरान्त ही खाद एवं उर्वरकों का उपयोग करना चाहिए। यदि किसी कारणवश मृदा जांच ना हो सके, तो उस स्थिति में प्रति हैक्टेयर निम्न मात्रा में खाद एवं उर्वरक ज़रुर डालें :–

गोबर की खाद	: 5–10 टन
नाइट्रोजन	: 20 किलो
फास्फोरस	: 20 किलो
पोटाश	: 25 किलो
जिप्सम	: 25 किलो

लेकिन ऐसे क्षेत्रों में जहां पर आलू या मटर के बाद मूंग उगानी हो, तो वहां पर केवल 40–60

शेष पृष्ठ 8 पर

तालिका–1 : ग्रीष्मकालीन मूंग की उन्नत किस्में

राज्य	उन्नत किस्में
दिल्ली	के–851, पी.एस.–16, पी.एस.–10, पूसा बैशाखी, पूसा–672, पूसा–9531, पी.डी.एम.–139
मध्य प्रदेश	के–851, पी.एस.–16, पूसा बैशाखी, पी.डी.एम.–16, बी. एम.–4, पी.डी.एम.–54, गुजरात–3, टी.ए.आर.एम.–2, 18, ए.के.एम.–8803
उत्तर प्रदेश	के–851, पी.एस.–16, पूसा बैशाखी, पी.एस.–7, पी.डी. एम.–11, पी.डी.एम.–54, हम–1 (मालवीय जागृति), हम–2, पूसा विशाल, हम–8, पन्त मूंग–4, पी.डी.एम.–139
राजस्थान	पी.एस.–16, पूसा बैशाखी, पन्त मूंग–2, आर.एम.जी.–62
बिहार	पी.डी.एम.–11, 54, सुनैना, नरेन्द्र मूंग–1, एम.यू.एम.–2, पंत मूंग–4
हरियाणा	पी.एस.–16, के–851, जी–65, पी.एस.–7, पूसा बैशाखी, आशा, पूसा विशाल, एस.एम.एल.–32, एम.एल.–267
पंजाब	एस.एल.–32, पी.एस.–16, पूसा बैशाखी, पूसा विशाल, एस.एम.एल.–668, एस.एम.एल.–32
गुजरात	पी.एस.–16, एम.एल.–613, गुजरात एम–3, टी.ए.आर.एम. –2, 18, एस.के.यू.–8803, फूले एम.–2, पी.डी.एम.–11
पश्चिमी बंगाल	बी.–105 (पन्ना), पी.एस.–16, पी.डी.एम.–11
कर्नाटक	पी.एस.–7, पी.एस.–16
सभी क्षेत्रों के लिए	के–851, पी.एस.–7, पी.एस.–16, पूसा बैशाखी, गंगा–8

पशुओं के बांझपन का उपचार

पशुओं में अनेक प्रजनन संबंधी समस्यायें होती हैं, जिनके कारण उनकी क्षमता प्रभावित होती है। इनसे पशु कभी–कभी बांझपन का शिकार भी हो जाता है और अंततः उत्पादन क्षमता काफी कम हो जाती है। यदि हम पशुओं में बांझपन के कारकों की जानकारी रखें एवं उनके निदान के लिए समय रहते प्रयास करें तो वर्तमान पशु उत्पादन दर को और ज्यादा बढ़ा सकते हैं। प्रस्तुत लेख में ऐसे कारकों तथा निदान के उपायों पर चर्चा की गई है।

पशुओं द्वारा सामान्य प्रजनन में असफलता बांझपन कहलाता है। बांझपन मुख्यतया चार कारणों से होता है:

* शारीरिक
* हार्मोनल
* संक्रामक
* प्रबंधकीय

शारीरिक कारण :- कभी-कभी नवजात पशु का जननतंत्र जन्म से ही कम विकसित होता है, जो बांझपन का कारण बनता है। बहुत से पशु एक-दो बार बच्चा देने के बाद जनन तंत्र के रोगों के शिकार हो जाते हैं, जो बाद में बांझपन में परिवर्तित हो जाता है। शारीरिक बांझपन के कारणों को निम्न वर्गो में विभाजित किया जा सकता है:

* पैतृक या वंशगत कारण।
* जननग्रंथियों की अनुप-स्थिति।
* अंडाशय का छोटा होना।
* जननलिका का अवरूद्ध होना।
* योनि के रास्ते में किसी भित्तीय झिल्ली का पाया जाना।
* ग्रीवा (सरविक्स) का अनुपस्थित होना।
* ग्रीवा में दो मुख का होना।

अर्जित कारण :- * अंडाशय तथा अंडवाहिनी में घाव।
* बच्चेदानी का किसी अन्य भाग से जुड़ जाना।
* बच्चा देते समय जन्न मार्ग में चोट लग जाना।
* गुदा एवं भग के बीच के भाग का फट जाना।
* ब्याने के समय भाग का छिल जाना।
* ग्रीवा का मोटा हो जाना।
* योनि का मोटा हो जाना।
* मादा जनन अंगों में कैंसर हो जाना।

हार्मोनल कारण :- ऋतु, चक्र, विशेष हार्मोन्स के प्रभाव से संचालित होता है। इन हार्मोन्स से स्त्राव से किसी भी प्रकार के गर्भाधान से पशु के ऋतु चक्र मं असमानता व जनन में अयोग्यता पाई जाती है।

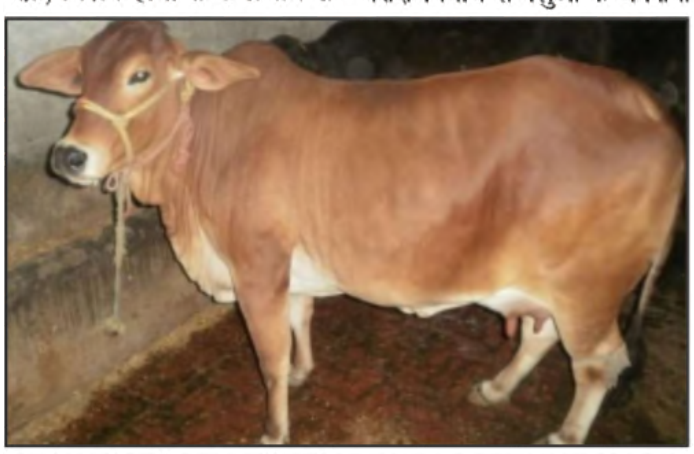

अमदकाल (पशु का गर्मी मे न आना) :- पशु बांझपन के प्रकरणों में 45 प्रतिशत प्रकरण अमदकाल के होते है। इनमें मादा पशुओं में मदकाल के लक्षण नहीं दिखाई पड़ते है। पशुओं में मदकाल कवेल गर्भावस्था एवं ब्याने के बाद 30 दिनों तक अनुपस्थित रहता है। इसके अलावा गाय और भैंस प्रत्येक 21 दिनों पर गर्मी में आती है। ब्याने के 45 दिनों बाद से 60वें दिन के बीच भैंस का लगभग सामान्य मदकाल होना चाहिए। इस समय के बाद पशु को ग्याभिन हो जाना चाहिए। यह पशुपालकों के लिए आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद भी होता है।

कारण :- * अंडाशय पर स्थाई पीतपिंड का बन जाना।
* अंडाशय पर गांठ का बन जाना।
* बच्चेदानी में शोथ।
* अंडाशय का छोटा होना।
* कुपोषण।
* पुराना रोग (टी.बी., जोन्स रोग, आरथ्राईटिस)।

अंडाशय पर पीतपिंड होने पर अमदकाल से प्रभावित पशु की चिकित्सा :- अंडाशय पर पीतपिंड उपस्थित होने पर अमदकाल की स्थिति पशुओं में बहुतायत में देखने को मिलती है। पशुओं के गाभिन होने की दशा में अमदकाल के लक्षण दिखाई देते हैं। अतः ऐसी स्थिति में गुदा परीक्षण विधि से पशुओं के जननांगों की जांच कराकर उसके गाभिन होने की सही स्थिति का पता लगाया जा सकता है। मादा के जननांगों की अन्य कई अवस्थायें हैं। इसमें अंडाशय में पीतपिंड के उपस्थित होने के पश्चात् मादा पशु गर्मी मे नहीं आती है। उदाहरणार्थ – बच्चेदानी कें अंदर शिशु का मरना एवं सूख जाना, बच्चेदानी में संक्रमण होना, पशुओं के बढ़वार के समय विकार उत्पन्न होना, बच्चेदानी में मवाद होना एवं बच्चेदानी की बीमारी का गलत उपचार किया जाना।

अमदकाल के उपचार के लिए पशु की गहन जांच अति आवश्यक है। पशु प्रजनन अभिलेखों का बारीकी से अध्ययन तथा गुदा विधि से परीक्षण और जननांगों के विषय में अधिकाधिक जानकारियां एकत्रित करने के बाद ही चिकित्सा प्रारंभ करनी चाहिए। यदि पशु के अंडाशय पर पीतपिंड उपस्थित हो और पशु अमदकाल में हो तो निम्न उपाय अपनाये जा सकते है;

प्रोस्टग्लैडिन का इंजेक्शन :- ल्यूटालाईज (डाइनोप्रोस्ट) 25 मि.गा., इस्ट्रूमेट (क्लोप्रास्टिनाल) 250-500 माईक्रोग्राम, इक्यूमेट (फ्लूप्रोस्टिनाल) 250-500 माईक्रोग्राम, प्रोसाल्विन (ल्यूप्रोस्टियाल) 15 मि.ग्रा., इलिरिन (रियाप्रोस्ट) 250-500 मि.ग्रा. अथवा डाईनोफर्टिन (ट्रोमेथामिन) 15 मि.ग्रा., इनमें से कोई भी इंजेक्शन अंतः मांसपेशीय देने से मादा पशु अगले 2 या 3 दिन में गर्मी में आ जाती है।

इस्ट्रोजन का अंतः मांसपेशीय इंजेक्शन :- जैसे प्रोगिनाना डीपोट (स्ट्राडियाल वैलरेट) 5-8 मि.ग्रा. अथवा स्ट्राडियाल वेंजोएट 0.006 मि. ग्रा. देने से तथा 2 से 4 दिन बाद दोहराने से पीतपिंड का अंतर्वलन, गर्भाशय की सफाई तथा मदचक्र प्रारंभ हो जाता है।

प्रोजेस्टोजेन्स :- जैसे सिंक्रोमेट-बी या क्रेस्टार के कैप्सूल को कान की बाहरी सतह पर लगाकर, 9 या 10 दिनों तक रहने दें। कैप्सूल निकालने के 2 दिन पूर्व (7वें या 8वें दिन) प्रोस्टग्लैंडिन 2 मि.ली. अंतः मांसपेशीय लगायें। कैप्सूल निकालने (9वें या 10वें दिन) के 56-60 घंटे बाद पशु को गर्भित करनाने से गर्भधारण की दर में काफी उपरोक्त उपचार किसी प्रशिक्षित पशु चिकित्सक की निगरानी में करें।

यदि पशु के भग से लगातार स्त्राव आ रहा है तथा उसमें गंदापन है तो स्त्राव का सुग्राही परीक्षण करवाकर उचित दवा देने से 5 से 6 दिनों में गंदे स्त्राव का आना बंद हो जाता है एवं संक्रमण दूर होते ही मादा पशु मदकाल के लक्षण दूर होते ही मादा पशु मदकाल के लक्षण प्रदर्शित करने लगती है।

पशु का शांत उठना :- प्रायः यह भी देखा गया है कि अनेक पशुओं में गर्मी के लक्षण स्पष्ट परिलक्षित नहीं होते है। अर्थात् मादा पशु अस्पष्ट या असामान्य मदकाल की समस्या से ग्रसित होती है। भैंसों में यह समस्या गायों की तुलना में कहीं ज्यादा होती है। अध्ययन के दौरान भैंसों में अस्पष्ट मदकाल की समस्या 6-30 प्रतिशत तक रिपोर्ट की गई है। इस समस्या से प्रभावित पशुओं में गुदा परीक्षण पर पता चलता है कि उसके अंडाशय पर पीतपिंड उपस्थित रहता है तथा जनन अंगों में भी मदकाली में होने वाला परिवर्तन साफ तौर पर पता चलता है। प्राकृतिक गर्भाधान में सांड, ऐसे पशुओं में मदकाली बड़े ही आसानी से पता लगा लेता था, परंतु कृत्रिम गर्भाधान के विकास के साथ पशुपालकों को ऋतुकाल की पहचान स्वयं करनी पड़ती है। अस्पष्ट गर्मी के लक्षणों का कारण अंडाशय पर उपस्थित वयस्क ग्रेफियन फॉलिकल द्वारा उत्पादित इस्ट्रोजन हारमोन की मात्रा का कम होना भी हो सकता है।

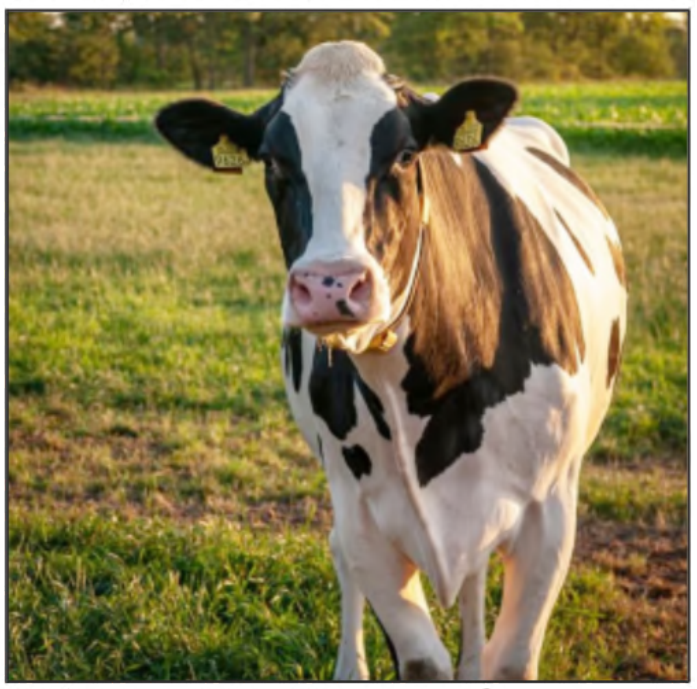

भैंसों में प्रजनन पूरे वर्ष भर नही होता है। अधिकतर भैंसें सर्दियों के मौसम में यानी अक्तूबर से मार्च तक गर्मी (मद) पर आती है तथा इसी दौरान प्रजनन शक्ति अधिक होती है। यह अभी तक पूर्ण रूप से ज्ञात नहीं है कि एक निश्चित मौसम में गर्मी पर आना एक आनुवंशिक लक्षण है अथवा खान-पान या मौसम के प्रभाव के कारण का परिणाम है। यह पाया गया है कि भैंसे, गायों की अपेक्षा सौर विकिरण एवं उच्चताप के लिए ज्यादा सुग्राही होती है। भैंसों के शरीर की मोटी अधिचर्म स्तर (इपिडर्मल लेयर) एवं उनके शरीर का गाढ़ा रंग, गर्मियों में अधिक ऊर्जा का अवशोषण करता है। भैंसों की चमड़ी में प्रति इकाई क्षेत्रफल में पसीने की ग्रंथियां की काफी कम होती हैं, जिसके फलस्वरूप शरीर का ताप काफी बढ़ जाता है। गर्मियों में हरा चारा एंव पोषक तत्वों की कमी भी भैंसों में प्रजनन क्षमता का ह्रास करती है। अतः गर्मियों में यदि हम भैंसों को सदैव छायादार स्थान पर बांधें एवं दिन में 2-3 बार स्नान करायें अथवा पानी भरे तालाब में लोटने की व्यवस्था रखें तो ग्रीष्म प्रजननहीनता की समस्या को काफी हद तक कम किया जा सकता है।

पुटीय डिम्बग्रंथि :- भैंसों में पुटीय डिम्बग्रंथि की बीमारी गायों की अपेक्षा कम होती है। भैंसों में इसकी प्रभाव सीमा 0. 9-2.0 प्रतिशत तक देखी गई है। भैंसों में इस बीमारी की प्रतिशत्ता कम होने का कारण, इनमें दुग्ध उत्पादन का तनाव गायों की अपेक्षा कम होना हो सकता है। पुटीय डिम्बग्रंथि मुख्यतः दो प्रकार की हो सकती है।

ग्राफियन पुटि :- इस स्थिति में डिम्बक्षरण नहीं हो पाता तथा जल्दी-जल्दी ऋतुमयी होती है। भैंसों की अपेक्षा गायों में ये लक्षण ज्यादा दिखाई देते है।

ल्यूटिनीकृत पुटि :- इस स्थिति में भी डिम्बक्षरण नहीं होता है। डिम्बाशय पर ल्यूटिनीकृत पुटि होने पर पशु अमदकाल के लक्षण प्रदर्शित करता है।

पुटीय दशा का मुख्य कारण

शेष पृष्ठ 8 पर

स्वास्थ्य की दृष्टि से

अर्जुन की छाल का महत्व

मीनू सिरोही एवं वीनू सांगवान,
खाद्य एवं पोषण विभाग,
चौ. चरण सिंह हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार

अर्जुन एक सदाबहारी वृक्ष है, जो भारत जैसे गर्म जलवायु वाले देश के विभिन्न क्षेत्रों जैसे हरियाणा, उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र इत्यादि में पाया जाता है। वैसे तो पोषण व औषधीय दृष्टि से अर्जुन के सभी भाग जैसे पत्तियां, जड़, फल, बीज व छाल सभी उपयोगी हैं, परन्तु अर्जुन की छाल स्वास्थ्य की दृष्टि से सबसे अधिक महत्वपूर्ण है।

इसकी छाल में विभिन्न प्रकार के पोषक तत्व जैसे बीटा कैरोटीन, विटामिन सी, खनिज लवण जैसे कैल्शियम, क्रोमियम, आयरन, ज़िंक, कॉपर, मैग्नीशियम इत्यादि, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, फाइबर व फाइटोकैमिकल्स जैसे फ्लेवोनॉइड्स, ग्लाइकोसाइड्स, पॉलीफिनाल्स, बीटा सीटोस्टिरोल इत्यादि पाए जाते हैं। ये फाइटोकैमिकल्स तथा विटामिन्स जैसे विटामिन सी व बीटा कैरोटीन शरीर में एंटीऑक्सीडेंट्स का कार्य करते हैं। एंटीऑक्सीडेंट्स हमारे शरीर में फ्री रेडीकल्स के निर्माण को रोकते हैं और हमारे शरीर को विभिन्न प्रकार के गंभीर रोगों जैसे कैंसर, हार्ट अटैक, गुर्दे, फेफड़े, लीवर इत्यादि के रोगों व मधुमेह के उपचार के लिए किया जाता है। वैसे तो बाज़ार में विभिन्न प्रकार की मानव निर्मित दवाईयां उपलब्ध हैं, जिनका प्रयोग हृदय रोगों तथा मधुमेह के उपचार के लिए किया जाता है। परन्तु जहां एक ओर हर वर्ग इन्हें खरीदने में असमर्थ है, वहीं इन दवाईयों के कई विपरीत प्रभाव भी देखने को मिलते हैं।

विभिन्न अध्ययनों से यह सिद्ध हो चुका है कि अर्जुन की छाल हृदय व मधुमेह के रोगियों के इलाज के लिए रामबाण है। वहीं दूसरी ओर लम्बे समय तक इसका प्रयोग करने से शरीर के अन्य अंगों जैसे लीवर, गुर्दे इत्यादि पर इसका कोई दुष्प्रभाव भी नहीं पड़ता है। वैसे तो बाज़ार में आजकल अर्जुन की छाल से बनी चाय, कैप्सूल व गोलियां उपलब्ध है, परन्तु घर पर भी अर्जुन की छाल से पेय पदार्थ तैयार किए जा सकते हैं। 10 ग्राम अर्जुन की छाल को 300-400 मिलीलीटर पानी में तब तक उबाला जाता है, जब तक कि पानी की मात्रा 100-150 मिलीलीटर रह जाए। फिर उबले पानी को छान कर ठंडा करके प्रति दिन सुबह के समय खाली पेट पीना चाहिए।

अर्जुन की छाल के फायदे :

1. अर्जुन की छाल में क्यू-10 नामक कोएन्जाइम पाया जाता है, जो हृदय की मांसपेशियों को मज़बूत बना कर हृदय की कार्य क्षमता को बढ़ाता है।
2. यह भोजन में उपस्थित कोलेस्ट्राल का बड़ी आंत द्वारा अवशोषण बढ़ा देता है, जिससे शरीर से अधिक से अधिक कोलेस्ट्राल का निष्कासन हो सके और शरीर में कोलेस्ट्राल की मात्रा सामान्य बनी रहे।
3. यह लीवर द्वारा पित्त रस के निर्माण को तेज़ कर देता है, जिससे अधिक से अधिक कोलेस्ट्राल पित्त रस बनाने में प्रयोग हो सके।
4. यह शरीर में बुरे कोलेस्ट्राल के निर्माण को कम करता है और अच्छे कोलेस्ट्राल के निर्माण को बढ़ाता है।

5. यह कोलेस्ट्राल के निर्माण में सहायक एन्जाइम्स की कार्य विधि को कम करता है।
6. यह शरीर में रक्त को गाढ़ा होने से रोकता है, जिससे रक्त आसानी से रक्त वाहिनियों द्वारा पूरे शरीर में लाया और ले जाया जा सके।
7. यह रक्त वाहिनियों को आराम की स्थिति प्रदान करके उच्च रक्तचाप को नियंत्रित रखता है।
8. यह शरीर में बुरे कोलेस्ट्राल के ऑक्सीकरण को रोकता है, जिससे वह रक्त वाहिनियों में खून के प्रवाह में बाधा उत्पन्न ना करे।
9. अर्जुन की छाल में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के फाइटोकैमिकल्स व अन्य एंटीऑक्सीडेंट्स हृदय तथा शरीर के अन्य भागों से रक्त को लाने व ले जाने वाली रक्त वाहिनियों में खून का थक्का जमने से रोकते हैं, जिससे अचानक हार्ट अटैक, ब्रेन हैमरेज इत्यादि का खतरा कम हो जाता है।
10. यह शरीर में ग्लूकोज़ से ग्लाइकोजन तथा ग्लूकोज़ से ऊर्जा के निर्माण में सहायक एन्जाइम्स की कार्यविधि को बढ़ाता है, जिससे रक्त में गलूकोज़ की मात्रा सामान्य बनी रहे। यह मधुमेह को भी नियंत्रित करता है।
11. अर्जुन की छाल में पाए जाने वाले एंटीऑक्सीडेंट्स शरीर के महत्वपूर्ण अंगों जैसे लीवर, गुर्दे, मस्तिष्क, आँखों की रेटिना, हृदय इत्यादि को फ्री रेडिकल्स के प्रभाव से बचाते हैं। ये शरीर में बनने वाली विभिन्न एंटी- ऑक्सीडेंट्स जैसे कैटालेज, सुपर ऑक्साइड डिसम्यूटेज़ इत्यादि की कार्य क्षमता को भी बढ़ाते हैं।

विभिन्न आयु वर्ग के व्यक्ति यदि अर्जुन की छाल व इससे बने पेय पदार्थों व अन्य खाद्य पदार्थों को प्रति दिन अपने आहार में शामिल करते हैं, तो वे हृदय के विभिन्न रोगों व मधुमेह, कैंसर जैसे गंभीर रोगों से अपने आपको मुक्त करके स्वस्थ, तनाव मुक्त व लम्बा जीवन जी सकते हैं।

बेबी कॉर्न : फसलोपरांत प्रबंधन और मूल्य संवर्धन

बेबी कॉर्न (मक्की) एक अनफर्टिलाईज्ड मक्का है, जिसे पौष्टिक सब्जियों के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। यह स्वादिष्ट सजावटी व विटामिन और खनिजयों में समृद्ध तथा आसानी से पचाने योग्य रेशेदार प्रोटीन का एक अच्छा स्त्रोत है। यह एक जैविक खाद्य है, जो हस्क से सुरक्षित है और कीटनाशकों के रासायनिक अवशेषों से मुक्त है। बेबी कॉर्न को मूल्य वर्धित उत्पादों को बनाने के लिए उपयोग किया जाता है।

यह ग्रामीण युवाओं व महिलाओं के लिए आय और रोजगार पैदा करवे वाली एक संभावित फसल है, साथ ही साथ मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए भी उपयुक्त है। बेबी कॉर्न की कम उत्पादन की लागत होने के कारण भारत बेबी कार्न के क्षेत्र में एक संभावित निर्यातक हो सकता है। पोस्ट फसल प्रबंधन (पोस्ट हार्वेस्ट मैनेजमेंट) बेबी कॉर्न की उपज की गुणवत्ता, सुरक्षा तथा बाजार में प्रतिस्पर्धात्मकता के आलावा उत्पादाकें द्वारा अर्जित मुनाफे को निर्धारित करता है। पोस्ट फसल प्रौद्योगिकी में कटाई डी-हस्किंग, ग्रेडिंग, पैकेजिंग, परिवहन, प्रसंस्करण, भंडाकरण, गुणवत्ता मानकों का विश्लेषण और लेबलिंग जैसे निम्नलिखित कार्य शामिल है।

बेबी कॉर्न (मक्की) की कटाई :- कटाई के बाद बेबी कॉर्न को अच्छे वेंटिलेशन वाले छायादार स्थानों में रखना चाहिए। इसके अलावा इसे ढेर कर के नहीं रखना चाहिए तथा बेबी कॉर्न को कुछ दिनों के लिए छोड़ देना चाहिए। यदि संभव हो तो फसल की कटाई के तुरंत बाद इसे डीहस्क करना चाहिए।

बेबी कॉर्न (मक्की) की डी-हस्किंग :- बेबी कॉर्न से भूसी निकालने के लिए पतली चाकू का प्रयोग कर मक्की को लंबाई में थोड़ा खोलें। फिर बेबी मकई के बड़े छोर के आस-पास चाकू का उपयोग करें और कानों पर स्लिट के साथ इसका हस्क निकाल लें, लेकिन साथ ही साथ ध्यान दें कि आंतरिक स्पाईक्स को नुक्सान नहीं पहुंचे। सभी रेशाम को ठीक से हटाना चाहिए और फिर कंटेनरों जैसे की दफती बक्से शुद्ध प्लास्टिक की टोकरियों में साफ बेबी कॉर्न को रखें ताकि वेंटिलेशन को सुविधाजनक बना सकें। बक्से को छायादार क्षेत्रों में रखा जाना चाहिए और उस पर पानी नहीं छिड़कना चाहिए अन्यथा इस में कालापन आ जायेगा तथा यह सड़ जाएगा।

बेबी कॉर्न (मक्की) की ग्रेडिंग :- बेबी मक्की की छंटाई व् वर्गीकरण मशीन व मैन्युअल रूप से किया जा सकता है। बेबी मक्की के ग्रेड जैसे कि (बड़े आकार) 11-13 सैं.मी. लंबा और 1.4-1.5 सैंटीमीटर का व्यास, (मध्यम आकार), 7-11 सैं.मी. लंबा 1.2-1.4 सैं.मी. व्यास) और (छोटे आकार) 4-7 सैं.मी. लंबा 1.0-1.2 सैं.मी. व्यस है।

बेबी कॉर्न की पैकेजिंग :- अधिक समय तक संरक्षण के लिए बेबी कॉर्न को कांच के बर्तन में पैक करना चाहिए, जिसमें 52 प्रतिशत बेबी कॉर्न के साथ 48 प्रतिशत नमकीन घोल हो।

बेबी कॉर्न की उतराई :- बेबी मक्की के उत्पादों को आमतौर पर हवाई जहाज से निर्यात किया जाता है, क्योंकि वे बहुत जल्दी खराब होते है। कॉर्न के पैकेज को पैकिंग क्षेत्र से हवाई अड्डे तक शीत ट्रकों में पहुंचाया जाता है। मात्रा व दूरी की आवश्यकता के अनुसार परिवहन का तरीका चुना जाता है।

बेबी कॉर्न का प्रसंस्करण :- बेबी कॉर्न की शेल्फ लाईफ को बेहतर बनाने के लिए प्रसंस्करण किया जा सकता है। मुख्य प्रसंस्करण विधियों का उपयोग शैल्फ जीवन को सुधारने के लिए किया जाता है। इनमें कैनिंग, निर्जलीकरण और शीतलन प्रक्रिया शामिल है। कैनिंग बेबी कॉर्न प्रसंस्करण के लिए सबसे अधिक इस्तेमाल किया जाने वाला तरीका है, क्योंकि इसे महीनों तक संग्रहीत किया जा सकता है तथा दूर स्थानों तक परिवहन द्वारा भी पहुंचाया जा सकता है। सूखी हुई बेबी कॉर्न को पॉलीथीन वैक्यूम एवं टेट्रा पैक में पैक व लंबे समय तक अच्छी तरह से संग्रहीत किया जा सकता है। इसके अलावा अन्य सब्जियों की तरह शीतलन द्वारा भी इसे लंबे समय तक संग्रह कर सकते है।

बेबी कॉर्न का भंडारण :- बेबी कॉर्न की मिठास को बनाये रखने के लिए इसे तुरंत ही रेफ्रिजरेट करें। कम तापमान पर शूगर के स्टार्च के रूपांतरण की दर कम हो जाती है। डी-हस्क बेबी कॉर्न को अपनी गुणवत्ता बिना खोये एक हफ्ते के लिए रेफ्रिजरेट भी किया जा सकता है।

बेबी कॉर्न के गुणवत्ता मानक :- इसका रंग क्रीम या हल्का पीला होना चाहिए। बेबी कॉर्न की उपज को सामान्य स्वरूप में रखने के लिए, यह पूर्ण ताजा सड़ांध से मुक्त स्वच्छ पैकिंग के बाद असामान्य बाहरी नमीं से मुक्त, शीत भंडारण से हटाने के बाद कंडेनसेशन को छोड़कर किसी भी विदेशी गंध या स्वाद से मुक्त कीटों से मुक्त होना चाहिए। बेबी कॉर्न को सही तरीके से काटा जाना चाहिए। बेबी कॉर्न को गुणवत्ता पूर्वा स्थिति में किसी स्थान पर पहुंचने के लिए इसकी सही तरीके से कटाई फसलोपरांत प्रबंधन, भंडारण व परिवहन किया जाना चाहिए। भारत में बेबी कॉर्न का फसलोपरांत प्रबंधन सामान्य से भी कम है। क्षेत्र में अक्ष्म हैडलिंग और परविहन के स्तर पर कमीं इसकी बड़ी बाधाएं है। इसके अलावा, अन्य प्रमुख बाधाओं में भंडारण प्रसंस्करण पैकेजिंग ग्रेडिंग और बुनियादी ढांचे की खराब प्रौद्योगिकियों का होना शामिल है। भारत में फसल के नुक्सान के स्तर को कम करने व सिस्टम को अपग्रेड करने के लिए बेबी कॉर्न के क्षेत्र में तत्काल कार्रवाई करने की आवश्यकता है।

शेष पृष्ठ 6 की

पशुओं के बांझपन का उपचार

पिट्यूटरी ग्रंथि द्वारा प्लयूटिनीकृत हार्मोन (एल.एच.) के कम मात्रा में उत्पन्न होने से डिम्बक्षरण तथा पीतपिंड का विकास सामान्य रूप से न हो पाना है। इस दशा की चिकित्सा निम्न में से किसी एक विधि द्वारा की जा सकती है :

कोरूलान (3000 यूनिट), अंतर्शिरीय लगाना लाभदायक रहता है।

* रिसेप्टाल (जीएनआरएच), 5 मि.ली. को अंत:मांसपेशीय दिया जाये।

* फर्टाजिल, 5 मि.ली., अंत: मांसपेशीय को दिया जाये।

पीतपिंड (कार्पस ल्यूटियम) मे कमीं :- गर्भधारण के बाद अंडाशय के ऊपर पीतपिंड का साईज बढ़ने लगता है। गर्भ को बनाये रखने के लिए प्रोजेस्टेरोन नामक हार्मोन आवश्यक होता है, जो इसी पीतपिंड से निकलता है। यदि इस हार्मोन की मात्रा कम होती है तो शीघ्र ही भ्रूण की मृत्यु हो जाती है।

संक्रामक कारण :- जननांग कई प्रकार के रोगों के प्रति संवेदनशील होते हैं। जनन अंगों का संक्रमण दो प्रकार से संभवत है, एसेडिंग इन्फेक्शन तथा डिसेडिंग इन्फेक्शन। एसेडिंग इन्फेक्शन एक ऐसा संक्रमण है, जो बाह्य वातावरण से जनन नलिका में पहुंच जाता है। प्रसव के तुरन्त पश्चात् तथा पशु के गर्मी का समय इस प्रकार के संक्रमण का उपयुक्त समय है। इसी पशु की जनन नलिका खुली होती है। प्राकृतिक गर्भाधान के समय संक्रमित नर से मादा के जनन अंगों का संक्रमण हो जाना संभव है।

ब्रुसेलोसिस

* विब्रियोसिम
* ट्राईकोमोनिएसिस

कृत्रिम गर्भाधान के दौरान उपयोग में लाये जाने वाले उपकरणों की सफाई ठीक से न होने पर तथा प्रसव के उपरांत साफ-सफाई न रखने पर विभिन्न प्रकार के

जीवों का संक्रमण बच्चेदानी में हो जाता है। जिसमें स्टैफाई-लोकोकस, स्ट्रैपटोकोकम, इ. कोलाई, कोरिनवैक्टीरियम पायोजिनीज प्रमुख हैं। ये पशुओं में ठंडोमेट्राईटिस एवं पायोमेट्रा आदि उत्पन्न करके बांझपन करते है।

प्रबंधकीय कारण :- ग्रामीण परिवेश की गाय तथा भैसों में बांझपन का प्रमुख कारण प्रबंध का ठीक न होना है। इसके अंतर्गत निम्नलिखित कारण आते हैं:

पोषण की कमीं :- प्रोटीन, कार्बोहाईड्रेट, विटामिन तथा मिनरल तथा मिनरल की कमीं से बांझपन होता है। प्रोटीन की कमी से पशु ब्याने के बाद गर्मी में देर से आता है। इसकी कमीं खली तथा लेग्युमिनस चारा (बरसीम, लूसर्न, लोबिया) देकर दूर की जा सकती है। विटामिन-उ की कमीं से गर्भपात, कमजोर या मृत बछड़ों का जन्म और जेर रूकने की समस्या हो जाती है। इसकी कमीं को हरा चारा देकर दूर किया जाता है। विटामिन-बी की कमीं से एनीमिया हो जाता है, जो पशुओं में बांझपन उत्पन्नत करता है। फॉस्फोरस, कैल्शियम तथा मैग्नीशियम की कमी से पशु यौवन में देर से आता है तथा मरे हुए बच्चे पैदा होते हैं। गर्भधारण दर घट जाती है। कॉपर तथा ऑयरन की कमीं से गर्भधारण दर घट जाती है। आयोडीन की कमीं से गर्भपात, मृत बछड़ों का जन्म आदि की समस्या रहती है। सीलिनियम की कमीं से जेर का रूकना, बच्चेदानी में शोथ तथा ओवरी पर गांठ बनने की समस्या हो जाती है।

कृत्रिम गर्भाधान का समय पर न होना :- यदि पशु गर्मी में शाम को आता है तो कृत्रिम गर्भाधान सुबह कराना चाहिए और यदि सुबह गर्मी में आता है तो गर्भाधान शाम को कराना चाहिए।

(नोट :- पशुओं को दवा एवं इंजेक्शन पशु चिकित्सकों की अनुशंसा के अनुसार दें)

शेष पृष्ठ 3 की

ग्रीष्मकालीन मूंग उत्पादन की नूतन तकनीक

किलोग्राम फास्फोरस प्रति हैक्टेयर की दर से डालनी चाहिए, क्योंकि ऐसे खेत में नाइट्रोजन और पोटाश पर्याप्त मात्रा में होती है।

बुवाई का समय : ग्रीष्म-कालीन फसल की समय पर बुवाई करना नितान्त आवश्यक है। गुजरात में इसकी बुवाई मार्च के प्रथम सप्ताह में करने से सबसे अधिक उपज मिलती है, जबकि पूर्वी उत्तर प्रदेश में इसकी बुवाई मार्च के अन्तिम सप्ताह में करना उत्तम रहता है। हिसार (हरियाणा) में इसकी बुवाई का सर्वोत्तम समय 10-15 अप्रैल है। इसके बाद बुवाई करने से उपज पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

केवल उन्नत किस्में ही उगाएं : ग्रीष्मकालीन मूंग की अधिक पैदावार लेने हेतु इसकी उन्नत किस्में उगानी चाहिए। तालिका-1 में मूंग की उन्नत किस्मों का वर्णन किया गया है।

बीज की मात्रा : ग्रीष्मकालीन मूंग के लिए 30-37. 5 किलोग्राम बीज प्रति हैक्टेयर पर्याप्त होता है, जबकि खरीफ मूंग के लिए मात्र 15-20 किलोग्राम बीज पर्याप्त होता है।

बीजोपचार : मूंग के बीजों को उपचारित करने हेतु अनेक राइज़ोबियम कल्चरों का उपयोग किया जा सकता है, जिनमें जी. एम.बी.एस.-1, एम-10, के.एम. -1, एम.ओ.-5, एम.ओ.आर.-1 प्रमुख हैं। इनमें से किसी एक से बीजों को बोने से पूर्व उपचारित करना चाहिए।

विधि : 10 ग्राम गुड़ अथवा चीनी को 1 लीटर पानी में डालकर हल्का गर्म करें और घोल को पुन: ठण्डा कर लें। 200-250 ग्राम का पैकेट मूंग का विशिष्ट राइज़ोबियम कल्चर डाल कर भली-भांति मिला लें। अब इस घोल को 10 किलो बीजों के ऊपर डाल कर हल्के हाथों से इस प्रकार मिलाएं कि उन पर कल्चर की हल्की परत जम जाए। फिर बीज को छाया में सुखा लें। बीजों की बुवाई सायं:काल या प्रात:काल में करें, क्योंकि तेज़ धूप के कारण कल्चर के जीवाणुओं के मरने की आशंका रहती है।

पी.एस.बी. कल्चर से बीजोपचार : भूमि में अनुउपलब्ध फास्फोरस का उपलब्ध दशा में परिवर्तन हेतु पी.एस.बी. कल्चर सहायक होता है। इसलिए राइज़ोबियम कल्चर के साथ फॉस्फेट की उपलब्धता बढ़ाने हेतु पी.एस.बी. कल्चर का भी उपयोग करना चाहिए। इसके प्रयोग की विधि एवं मात्रा राइज़ोबियम कल्चर के समान की है।

बुवाई की दूरी : मूंग की बुवाई कितनी दूरी पर की जाए, यह किस्म, ऋतु एवं बुवाई प्रणाली

पर निर्भर करता है। अधिकांश छोटी अवधि वाली किस्मों को कम दूरी पर और लम्बी अवधि वाली किस्मों को अधिक दूरी पर बोया जाता है। ग्रीष्मकालीन मूंग में कम शाखाएं विकसित होती हैं और इसकी वानस्पतिक बढ़वार अधिक तापमान के कारण कम होती है। अत: इसके लिए कम दूरी पर बुवाई की जाती है। आमतौर पर मूंग की आपसी दूरी 25-30 सैंटीमीटर × 5 सैंटीमीटर रखी जाती है, जबकि हरियाणा में 20 सैंटीमीटर × 10 सैंटीमीटर की दूरी रखी जाती है। 3.33-4.00 लाख पौधों की संख्या प्रति हैक्टेयर अनुकूलतम मानी गई है। वर्गाकार बुवाई की तुलना में आयताकार बुवाई उत्तम मानी गई है।

सिंचाई : ग्रीष्मकालीन मूंग की सिंचाई, भूमि की किस्म एवं तापमान पर निर्भर करती है। पन्तनगर (उत्तराखण्ड) की सिल्ट चिकनी दोमट मिट्टी में 5 सिंचाईयों की आवश्यकता होती है। प्रत्येक सिंचाई में 6 सैंटीमीटर गहरी सिंचाई करनी पड़ती है। अत: कुल सिंचाईयों में 30 सैंटीमीटर (सिंचाई) जल की आवश्यकता होती है। अन्य क्षेत्रों में 3-4 सिंचाईयों की ज़रुरत होती है। पहली सिंचाई बोने के 20-25 दिन बाद और शेष सिंचाईयां 10-15 दिन के अंतराल पर करनी चाहिए। फूल आने से पूर्व और दाना भरते समय नमी के अभाव में सिंचाई अवश्य करनी चाहिए।

फसल सुरक्षा :

खरपतवार नियंत्रण : ग्रीष्मकालीन मूंग के साथ अनेक खरपतवार उग आते हैं, जो फसल के साथ नमी, पोषक तत्वों, स्थान, धूप, हवा आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं। अत: उनके नियंत्रण हेतु 2 बार निराई-गुड़ाई करनी चाहिए। पहली निराई-गुड़ाई फसल बोने के 20 दिन बाद और दूसरी 40 दिन बाद करनी चाहिए। खरपतवारों की रोकथाम के लिए खरपतवार-नाशकों का प्रयोग भी किया जा सकता है। अंकुरण से पूर्व पेंडीमैथालिन 1.0 किलो सक्रिय तत्व को प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। बोने के 20-30 दिन बाद एक बार निराई-गुड़ाई भी करनी चाहिए।

कीट नियंत्रण :

थ्रिप्स (केलोओथ्रिप्स इंडिक्स) : ये कीट पौधे को कोशिकाओं के अंदर प्रवेश कर जाते हैं और उन्हें खाकर क्षति पहुंचाते हैं। प्रभावित कोशिकाएं बेरंग हो जाती हैं और फिर भूरी होकर मुरझा जाती हैं। प्रभावित फूल अकसर कुरूप हो जाते हैं और पकने से पूर्व मिट जाते हैं।

चेपा (एफिस क्रॉक्सीवोरा) : इसके निम्फ और प्रौढ़ दोनों ही पौधों का रस चूस कर क्षति पहुंचाते है। फलियां भी प्रभावित होती है।

सफेद मक्खी : यह पौधों का रस चूस कर पौधे को क्षति पहुंचाते हैं। यह विषाणु रोग भी फैलाती है।

उपरोक्त कीटों की रोकथाम हेतु मोनोक्रोटोफॉस के 0.04 प्रतिशत घोल का छिड़काव करना चाहिए।

रोग नियंत्रण :

पीला मौज़ेक : ग्रीष्मकालीन फसल में यह रोग सबसे अधिक क्षति पहुंचाता है। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा फैलाया जाता है। पौधा छोटा रह जाता है। फूल गिर जाते है, पत्तियां पीली पड़ जाती है।

इस रोग की रोकथाम हेतु निम्न उपाय करने चाहिए :

* रोग प्रतिरोधी किस्में ही उगाएं।
* रोग फैलाने वाले कीटों को मारने हेतु कीटनाशकों का प्रयोग करें।
* बुवाई से पूर्व प्रति किलोग्राम बीज को 1 ग्राम क्रूजर इमिडा-क्लोप्रिड से उपचारित करना चाहिए।

कटाई : ग्रीष्मकालीन मूंग की कटाई समय पर करना नितान्त आवश्यक है, क्योंकि इसकी फलियों के चटकने और बीजों के झड़ने का भय रहता है। मूंग की सभी फलियां एक साथ नहीं पकती है। अत: इसकी फलियों की तुड़ाई करनी चाहिए। इसके बाद पूरी फसल को काट लिया जाता है। कटी फसल को खलिहान में भली-भांति सुखाकर बैलों की दाय चला कर बीजों को अलग कर लिया जाता है।

उपज : ग्रीष्मकालीन मूंग की उपज कई बातों पर निर्भर करती है, जिनमें जलवायु, भूमि, उगाई जाने वाली फसल की किस्म की विधि और फसल की देखभल प्रमुख है। यदि मूंग की उपरोक्त वर्णित नूतन तकनीक से खेती की जाए, तो प्रति हैक्टेयर 10-14 क्विंटल तक उपज मिल जाती है।

भण्डारण : बीजों को भण्डार-गृह में रखने से पूर्व, निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए :

* बीज में नमी 8 प्रतिशत होनी चाहिए।
* भण्डार-गृह सूखा एवं वायु अवरोध होना चाहिए।
* भण्डार-गृह को कीट मुक्त करते हेतु मैलाथियान 50 प्रतिशत घोल के 0.07 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए।
* सल्फास की 3 गोलियां प्रति टन बीज की दर से भण्डार-गृह में रखनी चाहिए।

प्रभावी बिन्दू :

* बुवाई समय पर ही करें।
* सिंगल सुपर फास्फेट का उपयोग बेसल ड्रैसिंग के रूप में करें, ताकि अधिक उपज मिल सके।
* मौज़ेक रोग से फसल को बचाने हेतु इसकी बुवाई मार्च के दूसरे सप्ताह तक ही कर देनी चाहिए।
* राइज़ोबियम कल्चर व पी. एस.बी. से बीजों को उपचारित करके ही बोयें।

पंक्तियों और पौधों की दूरी बताए अनुसार ही रखें।

* पौध संरक्षण उपाय समय पर अपनाएं।
* फलियों की तुड़ाई समय पर ही करें।

लेयर मुर्गी पालन में प्रबंधन नीति

लेयर : अंडा देने वाली मुर्गी को लेयर कहा जाता है।

ब्रूडिंग : नवजात चूज़े की 8 सप्ताह की आयु तक देखभाल करना। यह चूज़ों की मृत्यु दर को रोकने और अधिकतम वृद्धि प्राप्त करने के लिए किया जाता है।

प्राकृतिक ब्रूडिंग : सामान्य स्थिति में माँ मुर्गी चूज़ों को गर्मी प्रदान करती है और भोजन का भी ख्याल रखती है।

कृत्रिम ब्रूडिंग : कृत्रिम ब्रूडिंग के तहत कृत्रिम ब्रूडर का तापमान नियंत्रित किया जाता है। माँ मुर्गी की जगह कृत्रिम रूप से तापमान नियंत्रित किया जाता है।

ब्रूडर : तापमान नियंत्रण के लिए प्रयोग होने वाला उपकरण।

कृत्रिम ब्रूडिंग में निम्नलिखित बिंदुओं का पालन किया जाना चाहिए।

चूज़ों के आने से पहले तैयारी :

* मुर्गी घर कम से कम 3-4 सप्ताह के लिए रिक्त होना चाहिए।
* अच्छी तरह से सभी दीवारों, छत, फर्श, दरारों और उपकरणों को कीटाणु रहित करें।
* सभी पानी के बर्तन और स्त्रोत साफ करें।
* दीवारों पर चूना करें।
* ब्रूडर का तापमान 90-95 डिग्री पर सैट करें।
* ब्रूडर परिपत्र रूप में प्रदान किया जाना चाहिए।
* ब्रूडर गार्ड के अंदर साफ बिछावन सामग्री (2-4 इंच गहरा) प्रदान करें।

ब्रूडर (0-8 हफ्ते) में चुनें यह प्रबंधन नीति :

* ब्रूडर के तहत 5 वर्ग इंच प्रति चूज़े को प्रदान करें।
* ब्रूडिंग को 95 प्रतिशत तापमान पर शुरू किया जाना चाहिए और इसे 5 डिग्री प्रति सप्ताह तक कम किया जाना चाहिए, जब तक 70 डिग्री सैल्सियस प्राप्त हो जाता है।
* डी-बीकिंग (चोंच काटना) 2 सप्ताह की उम्र में किया जा सकता है।
* ब्रूडिंग अवधि के दौरान निरंतर प्रकाश प्रदान करें।
* स्वच्छ ताज़े पानी की व्यवस्था रखें।
* किसी भी तरह की असामान्यता का निरीक्षण करते रहें।
* फीडर की ऊंचाई को चूज़ों की सुविधा के लिए समायोजित किया जाना चाहिए।
* बिजली की विफलता के मामले में एक विकल्प अवश्य रखें।

ग्रोअर मुर्गी का प्रबंधन (9-20 सप्ताह) :

* 9 सप्ताह की उम्र में मुर्गियों को ग्रोअर कहा जाता है।
* पानी पीने के बर्तन और फीडर, पक्षियों की ज़रुरत के अनुसार समायोजित किए जाने चाहिए।
* ग्रोअर मैश ही पक्षियों को खिलाया जाना चाहिए।
* क्रॉस वेंटिलेशन (हवा का प्रवाह) के लिए प्रावधान रखें।
* यदि आवश्यक हो तो डी-बीकिंग की जा सकती है।
* अनुसूची के अनुसार पक्षियों को टीकाकरण करें।
* नियमित अंतराल पर फीड सेवन और शरीर के वज़न की जांच करें।
* रोशनी 12 घंटे प्रति दिन प्रदान करें।
* प्रारंभिक रूप से अविकसित, रोगग्रस्त प्रकार के अवांछनीय मुर्गों को मार कर निष्काषित कर दें।

लेयर प्रबंधन (21-72 सप्ताह) :

* जब मुर्गी अंडा देना शुरू कर दें तो उसे लेयर कहते हैं।
* लेयर घर में वेंटिलेशन (हवा का प्रवाह) पर्याप्त होना चाहिए।
* पक्षियों को फीड, लेयर मैश ही दें।
* पक्षियों के लिए स्वच्छ बिस्तर की सामग्री से घोंसला बिछाएं।
* घोंसले की बिछावन सामग्री को नियमित अंतराल पर बदलें।
* अंडे को दिन में 3-4 बार एकत्र किया जाना चाहिए।
* बाहरी परजीवियों के खिलाफ समय-समय पर उपचार किया जा सकता है।
* मृत पक्षियों को तुरन्त लेयर घर से निकालें।
* प्रकाश की अवधि 12 घंटे से शुरू करके, 15-30 मिनट की बढ़ोत्तरी हर सप्ताह तक करें, जब तक प्रकाश की अवधि 16 घंटे तक पहुंच जाती है।

लेयर फार्म में जैव-सुरक्षा उपाय : जैव-सुरक्षा एक प्रथा है, जिसे बीमारी के प्रसार को रोकने के लिए विकसित किया गया हे।

जैव-सुरक्षा में तीन प्रमुख घटक हैं :

1. फार्म का दूसरे फार्मों से अलगाव
2. यातायात नियंत्रण
3. स्वच्छता

जैव-सुरक्षा उपाय इस प्रकार हैं :-

* बाड़ लगाना।
* आगंतुकों को न्यूनतम रखें।
* अन्य पोल्ट्री फार्म में आना-जाना सीमित रखें।
* मुर्गी के घर में से सभी जानवरों और जंगली पक्षियों को बाहर रखें।
* कीट नियंत्रण कार्यक्रम का अभ्यास करें।
* प्रति दिन मुर्गियों का निरीक्षण करें और रोग के लक्षणों को पहचानें।
* अच्छा वेंटिलेशन और शुष्क बिछावन बनाए रखें।
* फीड खिलेरने वाले डिब्बे को साफ रखें।
* फीड और उपकरणों का कोई आदान-प्रदान किसी अन्य फार्म से ना करें।
* मुर्गी घर और उपकरणों की कीटाणु शोधन और स्वच्छता नियमित रखें।

डॉ. अनुराग शर्मा व
अनिका शर्मा

मुंहपका-खुरपका रोग के लक्षण तथा बचाव

मुंहपका-खुरपका रोग विभक्त खुर वाले पशुओं का अत्यंत संक्रामक एवं घातक विषाणु जनित रोग है। यह गाय, भैंस, भेड़, बकरी, सूअर आदि पालतू पशुओं एवं हिरन आदि जंगली पशुओं को होता है।

कारण : यह रोग पशुओं को एक बहुत ही छोटे आंख से ना दिख पाने वाले कीड़े द्वारा होता है, जिसे विषाणु या वायरस कहते हैं। मुंहपका-खुरपका रोग किसी भी उम्र की गायें एवं उनके बच्चों में हो सकता है। इसके लिए कोई भी मौसम निश्चित नहीं है। कहने का मतलब यह है कि यह रोग कभी भी गांव में फैल सकता है। हालांकि गाय में इस रोग से मौत तो नहीं होती, फिर भी दुधारू पशु सूख जाते हैं। इस रोग का क्योंकि कोई इलाज नहीं है, इसलिए रोग होने से पहले ही उसके टीके लगवा लेना फायदेमंद है।

संक्रमण विधि : यह रोग बीमार पशु के सीधे संपर्क में आने, पानी, घास, दाना, बर्तन, दूध निकालने वाले व्यक्ति के हाथों से हवा से तथा लोगों के आवागमन से फैलता है। रोग के विषाणु बीमार पशुओं की लार, मुंह, खुर, थनों में पड़े फफोले में बहुत अधिक संख्या में पाए जाते हैं। यह खुले में घास चारा तथा फर्श पर चार महीनों तक जीवित रह सकते हैं लेकिन गर्मी के मौसम में यह बहुत जल्दी नष्ट हो जाते हैं। विषाणु जीवाणु जीभ, मुंह, आंत, खुरों के बीच की जगह थनों तथा घाव आदि के द्वारा स्वस्थ पशु के रक्त में पहुंचते हैं तथा 5 दिनों के अंदर उसमें बीमारी के लक्षण पैदा करते हैं।

लक्षण : इस रोग के आने पर पशु को तेज़ बुखार हो जाता है। बीमार पशु के मुंह, मसूड़े, जीभ के ऊपर नीचे ओंठ के अंदर का भाग खुरों के बीच की जगह पर छोटे-छोटे दाने से उभर आते हैं, फिर धीरे-धीरे ये दाने आपस में मिलकर बड़ा छाला बनाते हैं। समय पाकर यह छाले फैल जाते हैं और उनमें जख्म को जाता है। ऐसी स्थिति में पशु जुगाली करना बंद कर देता है। मुंह से तमाम लार गिरती है। पशु सुस्त पड़ जाते हैं। कुछ भी नहीं खाता-पीता है। खुर में जख्म होने की वजह से पशु लंगड़ा कर चलता है। पैरों के जख्मों में जब कीचड़ मिट्टी आदि लगती है, तो उनमें कीड़े पड़ जाते हैं और उनमें बहुत दर्द होता है। पशु लंगड़ाने लगता है। दुधारू पशुओं में दूध का उत्पादन एकदम गिर जाता है। वे कमज़ोर होने लगते हैं। समय पाकर व इलाज होने पर यह छाले व जख्म भर जाते हैं, परन्तु संकर पशुओं में यह

रोगी कभी-कभी मौत का कारण भी बन सकता है। यह एक विषाणु जनित बीमारी है, जो फटे खुर वाले पशुओं को ग्रसित करती है। इसकी चपेट में सामान्यत: गो जाति, भैंस जाति, भेड़, बकरी एवं सूकर जाति के पशु आते है।

मुख्य लक्षण : प्रभावित होने वाले पैर को झाड़ना (पटकना) पैरो में सूजन (खुर के आस-पास), लंगड़ाना, अल्प अवधि (एक से दो दिन) का बुखार खुर में घाव होना एवं घावों में कीड़ा हो जाना, कभी-कभी खुर का पैर से अलग हो जाना, मुँह से लार गिरना, जीभ, मसूड़े, ओष्ट आदि पर छाले पड़ जाते है, जो बाद में फूटकर मिल जाते है उत्पादन क्षमता में अत्यधिक ह्रास, बैलों की कार्य क्षमता में कमी प्रभावित, पशु स्वस्थ होने के उपरान्त भी महीनों हांफते रहते है।

रोग के बचाव व उपचार :

* रोग ग्रस्त पशु के पैर को नीम एवं पीपल के छाल का काढ़ा बनाकर दिन में दो से तीन बार धोना चाहिए।
* प्रभावित पैरों को फिनाइलयुक्त पानी से दिन में दो-तीन बार धोकर मक्खी को दूर रखने वाली मलहम का प्रयोग करना चाहिए।
* मुंह के छाले को 1 प्रतिशत फिटकरी अर्थात् 1 ग्राम फिटकरी 100 मिली लीटर पानी में घोलकर दिन में तीन बार धोना चाहिए। इस दौरान पशुओं को मुलायम एवं सुपाच्य भोजन दिया जाना चाहिए।
* पशु चिकित्सक के परामर्श पर दवा दें।

सावधानी : * प्रभावित पशु को साफ एवं हवादार स्थान पर अन्य स्वस्थ पशुओं से दूर रखें।

* पशुओं की देख-रेख करने वाले व्यक्ति को भी हाथ-पांव अच्छी तरह साफ कर ही दूसरे पशुओं के संपर्क में जाना चाहिए।
* प्रभावित पशु के मुंह से गिरने वाले लार एवं पैर के घाव के संसर्ग में आने वाले वस्तुओं पुआल, भूसा, घास आदि को जला देना चाहिए या जमीन में गड्ढा खोदकर चूना के साथ गाड़ दिया जाना चाहिए।
* इस बीमारी से बचाव के लिए पशुओं को पोलीवेंट वैक्सीन को वर्ष में दो बार टीके अवश्य लगवाने चाहिए।
* बीमार हो जाने पर रोग ग्रस्त पशु को स्वस्थ पशुओं से अलग कर देना चाहिए।
* बीमार पशुओं की देखभाल करने वाले व्यक्ति को भी स्वस्थ पशुओं के बाड़े से दूर रहना चाहिए। बीमार पशुओं के आवागमन पर रोक लगा देना चाहिए। पशुशाला को साफ-सुथरा रखें।

इस बीमारी से मरे पशु के शव को खुला नहीं छोड़ कर काट देना चाहिए।

खरीफ सीजन के लिए देश में उर्वरकों की पर्याप्त उपलब्धता, किसानों को घबराने की जरूरत नहीं – एफएआई

आगामी खरीफ सीजन से पहले उर्वरकों की उपलब्धता को लेकर उठ रही चिंताओं के बीच 'द फर्टीलाइजर एसोसिएशन ऑफ इंडिया' ने स्पष्ट किया है कि देश में यूरिया और फॉस्फेटिक उर्वरकों का भंडार कृषि जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त है। संगठन के अनुसार वैश्विक स्तर पर कुछ भू-राजनीतिक परिस्थितियों के बावजूद किसानों के लिए उर्वरक आपूर्ति में किसी बड़े व्यवधान की संभावना नहीं है।

एफएआई के प्रवक्ता ने बताया कि पश्चिम एशिया में चल रहे तनाव के कारण अंतरराष्ट्रीय उर्वरक व्यापार और आपूर्ति श्रृंखला को लेकर आशंकाएं जरूर पैदा हुई हैं, लेकिन भारत में मौजूदा भंडार और आपूर्ति व्यवस्था ऐसी है कि आने वाले खरीफ मौसम में किसानों को उर्वरकों की कमी का सामना नहीं करना पड़ेगा। उर्वरक उद्योग केंद्र सरकार, राज्य सरकारों और अन्य संबंधित एजेंसियों के साथ मिलकर देशभर में उर्वरकों के सुचारु वितरण को सुनिश्चित करने के लिए लगातार समन्वय कर रहा है।

भारत में इस समय कृषि का अपेक्षाकृत शांत दौर चल रहा है और खरीफ फसलों की बुवाई आम तौर पर जून से शुरू होती है। इस अवधि में उर्वरकों की खपत सामान्य रहती है, जिससे उद्योग को अपने भंडार को फिर से भरने और उत्पादन इकाइयों में नियमित रखरखाव कार्य करने का अवसर मिल जाता है।

उद्योग से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार चालू वित्त वर्ष 2025 26 के पहले दस महीनों में भारत में उर्वरकों के उत्पादन और आयात दोनों में वृद्धि दर्ज की गई है। पिछले वर्ष की समान अवधि में जहां कुल उपलब्धता लगभग 57 मिलियन टन थी, वहीं इस वर्ष यह बढ़कर करीब 65 मिलियन टन तक पहुंच गई है। इसमें यूरिया, डीएपी, कॉम्प्लेक्स उर्वरक, एसएसपी और एमओपी जैसे प्रमुख उर्वरक शामिल हैं।

विशेषज्ञों का कहना है कि यूरिया, डीएपी और एनपीके उर्वरकों का निरंतर उत्पादन तथा समय पर आयात होने से देश में प्रमुख पोषक तत्वों का पर्याप्त भंडार बना हुआ है। खास तौर पर डीएपी और एनपीके उर्वरकों का भंडार पिछले वर्ष की तुलना में लगभग 70 से 80 प्रतिशत तक बढ़ा है, जिससे किसी क्षेत्र में अस्थायी आपूर्ति बाधित होने की स्थिति में भी किसानों की जरूरतें पूरी की जा सकती हैं।

हालांकि उर्वरक उद्योग का एक बड़ा हिस्सा यूरिया उत्पादन के लिए आयातित आरएलएनजी गैस पर निर्भर है और इसका महत्वपूर्ण भाग पश्चिम एशिया से आता है। मौजूदा परिस्थितियों के कारण गैस आपूर्ति पर कुछ असर जरूर पड़ा है। इस स्थिति में उद्योग सरकार के साथ मिलकर गैस आवंटन को प्राथमिकता देने और उपलब्ध संसाधनों का बेहतर उपयोग करने की दिशा में काम कर रहा है, ताकि आगामी मौसम के लिए यूरिया की पर्याप्त उपलब्धता बनी रहे।

फॉस्फेटिक उर्वरकों के मामले में भारत ने अपने आयात स्रोतों को विविध बनाया है। देश मोरक्को, जॉर्डन, सऊदी अरब, रूस और बेलारूस जैसे देशों से कच्चा माल और उर्वरक प्राप्त कर रहा है, जिससे किसी एक क्षेत्र में आपूर्ति बाधित होने का जोखिम काफी हद तक कम हो जाता है।

उद्योग से जुड़ी कंपनियां भी दीर्घकालिक समझौतों के जरिए कच्चे माल की आपूर्ति सुनिश्चित करने की कोशिश करती हैं। भारतीय उर्वरक कंपनियां जैसे इंडियन पोटाश लिमिटेड, कोरोमंडल इंटरनेशनल लिमिटेड और प्रादीप फास्फेट लिमिटेड ने वैश्विक उत्पादकों के साथ फॉस्फोरिक एसिड, अमोनिया और रॉक फॉस्फेट की आपूर्ति के लिए दीर्घकालिक अनुबंध कर रखे हैं, जिससे अल्पकालिक आपूर्ति स्थिर बनी रहती है।

एफएआई के अनुसार वर्तमान वैश्विक परिस्थितियों के कारण सल्फर और अमोनिया जैसे कच्चे माल की कीमतों में उतार-चढ़ाव संभव है। ऐसे में उद्योग सरकार के साथ मिलकर यह सुनिश्चित करने की दिशा में काम करेगा कि खरीफ सीजन के लिए तय की जाने वाली न्यूट्रिएंट बेस्ड सब्सिडी दरें कच्चे माल की कीमतों और विनिमय दर में हुए बदलावों को ध्यान में रखते हुए तय की जाएं।

उद्योग विशेषज्ञों का मानना है कि वर्तमान भंडार, निरंतर उत्पादन और विविध आयात स्रोतों के कारण आगामी खरीफ मौसम में देश में उर्वरकों की आपूर्ति सामान्य बनी रहने की उम्मीद है, जिससे किसानों की खेती-किसानी गतिविधियों पर कोई बड़ा प्रभाव नहीं पड़ेगा।

बागवानी : उन्नत तकनीक अपनाकर खरबूजे की खेती से किसान बन सकते हैं मालामाल

गर्मी के मौसम में किसानों के लिए खरबूजे की खेती मुनाफे का साधन बन सकती है। कृषि विशेषज्ञों का कहना है कि यदि सही भूमि का चयन, समय पर बुवाई, संतुलित खाद-उर्वरक, वैज्ञानिक सिंचाई और कीट-रोग नियंत्रण के उपाय अपनाए जाएं, तो न सिर्फ उत्पादन बढ़ता है,

बल्कि फल की गुणवत्ता भी बेहतर होती है। अच्छी गुणवत्ता के कारण किसानों को बाज़ार में बेहतर दाम मिल सकता है। कृषि विशेषज्ञों का मानना है कि यदि किसान वैज्ञानिक सलाह के अनुसार खरबूजे की खेती करें, तो कम समय में अधिक मुनाफा कमा सकते हैं।

सही भूमि और खेत की तैयारी जरूरी

खरबूजे की खेती के लिए दोमट या अच्छी जल निकास वाली मिट्टी सबसे उपयुक्त मानी जाती है। मिट्टी का पी.एच. मान 6 से 7 के बीच होना चाहिए। विशेषज्ञों के अनुसार खेत की 3 से 4 जुताई कर भली-भांति तैयार करें और नालियां व थाले बनाएं। पर्याप्त नमी होने पर ही बुवाई करें, ताकि बीज का अंकुरण अच्छा हो सके।

बुवाई का समय और दूरी

गर्मी के मौसम में खरबूजे की बुवाई किसानों को अच्छा मुनाफा देती है। प्रति हैक्टेयर 3.5 से 5 किलो बीज पर्याप्त होता है। कतार से कतार की दूरी करीब 3 मीटर और पौधे से पौधे की दूरी लगभग 0.5 मीटर रखें, ताकि पौधों को पर्याप्त जगह और पोषण मिल सके। गर्मी में 4 से 7 दिन के अंतराल पर सिंचाई करें। खेत में जलभराव न होने दें और अधिक पानी की स्थिति में निकास की व्यवस्था सुनिश्चित करें। फल बनने के बाद सिंचाई कम कर दें। विशेषज्ञों के अनुसार, फल पकने के समय पानी देने से मिठास, घुलनशील तत्व और विटामिन-सी की मात्रा घट सकती है।

पोषक तत्वों का संतुलित प्रबंधन

अच्छी पैदावार के लिए बुवाई से 3-4 सप्ताह पहले 20-25 टन प्रति हैक्टेयर सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट खेत में मिलाएं। इसके साथ 80 किलो नाइट्रोजन, 50 किलो फास्फोरस और 50 किलो पोटाश प्रति हैक्टेयर दें। फास्फोरस व पोटाश की पूरी मात्रा और नाइट्रोजन की एक-तिहाई मात्रा बुवाई के समय दें। शेष नाइट्रोजन 25-30 दिन और 40-50 दिन बाद टॉप ड्रेसिंग के रूप में दें।

कीट-रोग से बचाव जरूरी

खरबूजे की फसल में लाल कद्दू भृंग और फल मक्खी का प्रकोप अधिक होता है, जो पत्तियों और फलों को नुकसान पहुंचाते हैं। समय पर छिड़काव और संक्रमित फलों की कटाई जरूरी है। चूर्णी फफूंद, जड़ गलन और एन्थ्रैक्नोज़ जैसे रोगों से बचाव के लिए बीज उपचार और अनुशंसित दवाओं का प्रयोग करें।

खरपतवार नियंत्रण से बढ़ेगी पैदावार

खरपतवारों के कारण उत्पादन में 20 से 80 प्रतिशत तक की कमी आ सकती है। बुवाई के 48 घंटे के भीतर स्टॉम्प का छिड़काव करने से शुरूआती खरपतवार नियंत्रित किए जा सकते हैं। इसके अलावा 30-35 दिन तक नालियों और थालों की निराई-गुड़ाई करते रहना जरूरी है, जिससे पौधों की बढ़वार बेहतर होती है।

पंजाब के मोगा ज़िले में दलहन फसलों के प्रति बढ़ा रुझान, किसान घटा रहे खेती की लागत

मूंग और अरहर का रकबा बढ़ा, बीज सब्सिडी पर भी उपलब्ध

मोगा ज़िले में दलहन आत्मनिर्भरता मिशन किसानों के लिए नई उम्मीद बन कर उभरा है। ज़िला खेतीबाड़ी अधिकारी डॉ. गुरप्रीत सिंह के मुताबिक, किसानों की जागरूकता और विभागीय सहयोग से इस वर्ष मूंग और अरहर की खेती में उल्लेखनीय बढ़ोत्तरी दर्ज की गई। खरीफ 2025 में 225 एकड़ में बोई गई मूंग वर्ष 2026 में बढ़ कर 305 एकड़ तक पहुंच गई। अरहर का रकबा 248.5 एकड़ से बढ़ कर 411 एकड़ हो गया।

डॉ. गुरप्रीत सिंह ने बताया कि 125 एकड़ के लिए 10 क्विंटल मूंग बीज और 375 एकड़ के लिए 15 क्विंटल अरहर बीज वितरित किया गया। 200 एकड़ में चने की बुवाई के लिए 2.20 क्विंटल बीज उपलब्ध करवाया गया। किसानों को कुल 87,250 रुपए की सब्सिडी दी गई। साथ ही 25 क्विंटल समर मूंग बीज सब्सिडी पर उपलब्ध करवाया जा रहा है, ताकि किसान गेहूं कटाई के बाद अतिरिक्त आय हासिल कर सकें।

उन्होंने कहा कि दलहनी फसलें कम पानी में तैयार होती हैं। ये मिट्टी में नाइट्रोजन की मात्रा बढ़ाती हैं और अगली फसल के लिए भूमि को उपजाऊ बनाती हैं। धान-गेहूं के पारम्परिक चक्कर से बाहर निकल कर दलहन अपनाने वाले किसान न केवल लागत घटा रहे हैं, बल्कि बाज़ार में बेहतर दाम भी प्राप्त कर रहे हैं। इसलिए किसान फसल विविधीकरण की दिशा में कदम बढ़ाएं और विभागीय योजनाओं का लाभ उठाएं। यदि इसी तरह दलहन का रकबा बढ़ता रहा तो मोगा ज़िला न केवल आत्मनिर्भर बनेगा, बल्कि प्रदेश में भी मिसाल कायम करेगा।

पंजाब में 1961–62 में 917 हज़ार हैक्टेयर में होती थी दलहन की खेती

एक दौर था, जब पंजाब में 917 हैक्टेयर (1961-62) में दलहन की खेती होती थी, उसके बाद गिरावट का जो दौर शुरू हुआ, वह संभलने का नाम ही नहीं ले रहा है। 2014-15 तक गिरते-गिरते यह 13 हज़ार हैक्टेयर तक पहुंच गई। उसके बाद इसमें थोड़ा सुधार शुरू हुआ, जो 2018-19 के दौरान 30 हज़ार हैक्टेयर तक पहुंच गया। इस गिरावट के कारणों में गेहूं-धान चक्र में उलझना रहा। लिहाजा, अब राज्य और केन्द्र सरकार के कार्यक्रमों में दलहन की खेती को बढ़ाना है, ताकि प्रति व्यक्ति खपत में बढ़ोत्तरी की जा सके। वैसे, देश में पिछले 70-72 सालों के दौरान दलहन के तहत क्षेत्र 20 से 37 मिलियन हैक्टेयर के बीच बना हुआ है।

स्वचेतना अभियान

पेड़ों को जिंदा रखने की हरी-भरी तकनीक

रेनू जैन

कोयंबटूर की जनता ने तय कर लिया कि जब भी कोई ऐसी विकास परियोजना लागू होगी तो जद में आ रहे सारे पेड़ों को स्कूल, पार्क, मंदिर परिसर या किसी ग्रीन बफर जोन में स्थानांतरित किया जाएगा। फलतरू कुछ ही सालों में 5,000 पेड़ स्थानांतरित किए गए। इनमें 85 फीसद पेड़ लहलहा रहे हैं।

बेशक, हरियाली खुदा की सबसे बड़ी नेमतों में से एक है। इसी से जीवन में आशा, उमंग और ताजगी जैसे भाव जागते हैं। सड़क चौड़ीकरण, हाईवे निर्माण या विकास की किसी दूसरी परियोजनाओं के लिए जब पेड़ रुकावट बन जाते हैं तो उन्हें काटने का दर्द अब हर नागरिक को समझ में आने लगा है। तमिलनाडु के कोयंबटूर शहर के लोगों को तब बहुत दुख हुआ जब सड़क चौड़ीकरण की वजह से 7,600 पेड़ों को खत्म कर दिया था। यह दुख इतना गहरा था कि वहां की कोयंबटूर की जनता ने तय कर लिया कि जब भी कोई ऐसी विकास परियोजना लागू होगी तो जद में आ रहे सारे पेड़ों को स्कूल, पार्क, मंदिर परिसर या किसी ग्रीन बफर जोन में स्थानांतरित किया जाएगा। फलतरू कुछ ही सालों में 5,000 पेड़ स्थानांतरित किए गए। सुखद परिणाम यह आया कि इनमें 85 फीसद पेड़ लहलहा रहे हैं यानी पेड़ों को नई जगह रास आ गई है। एक स्वचेतना अभियान यह भी सफल हो रहा कि लोगों ने अपने लिए एक नियम बनाया कि हर कटने वाले पेड़ के बदले लोग दस पौधे लगा रहे तथा उसकी देखभाल का जिम्मा भी खुद ही ले रहे।

इसी तरह पेड़ों को बचाने के कई छोटे-छोटे ही सही अभियान में लोगों की रुचि बढ़ती जा रही। पेड़ों के कटने से दुखी हैदराबाद के रामचंद्र अप्पारी ने भी ट्री ट्रांसलोकेटिंग तकनीक का इस्तेमाल किया तथा इसी तकनीक से वे हैदराबाद के करीब पांच हजार पेड़ों को नई जगह दे चुके हैं। उनकी कंपनी ग्रीन मॉर्निंग हॉर्टिकल्चर सन् 2010 से काम कर रही है। वे कहते हैं वर्ष 2008 में हैदराबाद की सड़कों को चौड़ी करने के लिए पेड़ कटने लगे तब उन्हें बहुत दुख हुआ। तब ऑस्ट्रेलिया में रह रहे अपने दोस्त से पेड़ों को स्थानांतरित किए जाने के उपायों पर पूछा। बस तभी से अब अपनी कंपनी के मार्फत सात हजार से ज्यादा पेड़ों को नया जीवन दे चुके हैं।

दरअसल, एक पेड़ को शिफ्ट करने की लागत दस हजार रुपये से लेकर डेढ़ लाख रुपये तक आती है। वर्ष 2010 में स्थापित उनकी कंपनी ग्रीन मॉर्निंग हॉर्टिकल्चर का टर्न ओवर लगातार बढ़ रहा है। वे कहते हैं हर शहर में प्रशासन को पेड़ों को स्थानांतरित करने के टेंडर निकालने चाहिए तथा इस तकनीक को बढ़ाना चाहिए। कम होते पेड़ों के लिए यह तकनीक वरदान साबित होगी। हैदराबाद के ही वट फाउंडेशन के प्रमुख पेंडि रेड्डी वर्ष 2010 से पेड़ बचाने का काम कर रहे हैं। पेड़ों के प्रति इतना लगाव है कि अब तक करीब 2200 पेड़ों को नया जीवन दे चुके हैं।

नेचर जर्नल की रिपोर्ट के अनुसार मानव सभ्यता की शुरुआत से मौजूदा पेड़ों की संख्या में अब तक 46 फीसदी की कमी आ चुकी है। दुनियाभर में हर साल दस अरब पेड़ काटे जा रहे हैं जबकि हर साल सिर्फ पांच अरब पेड़ ही लगाए जा रहे हैं। चिंता की बात यह भी है कि हर दो सेकंड में एक फुटबॉल के मैदान जितना जंगल काटा जा रहा है। अकेले भारत में दस लाख हेक्टेयर क्षेत्र में फैले जंगल कट रहे हैं।

ग्लोबल वार्मिंग तथा प्रदूषण की मार झेलते शहरों के लिए पेड़ों की कमी भी जिम्मेदार है। हमारे शास्त्रों में भी लिखा गया है कि एक पेड़ लगाना सौ गायों का दान देने के समान है। पद्मपुराण में जिक्र है कि जलाशय के निकट पीपल का पेड़ लगाने से व्यक्ति को सैकड़ों यज्ञों के बराबर पुण्य की प्राप्ति होती है। कहा जाता है कि पेड़ों की कतार धूल मिट्टी को 75 फीसद तक कम कर देती है और 50 फीसदी तक शोर को कम करती है। जो इलाका पेड़ों से घिरा होता है वह दूसरे दूसरे इलाकों की तुलना में 9 डिग्री ठंडा रहता है। वहां का एक पेड़ इतनी ठंडक पैदा करता है जितना एक एसी दस कमरों में 20 घंटों तक चलने पर करता है।

कम होते पेड़ों की वजह से कई दुष्प्रभाव होते है, जिसमें प्राकृतिक बाधाएं भी शामिल है। वनों की कटाई की वजह से भूमि का क्षरण होता है क्योंकि वृक्ष पहाड़ियों की सतह को बनाए रखने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वनों के विनाश के कारण वन्यजीव खत्म हो रहे हैं। पेड़ों की कई प्रजातियां लुप्त होने की कगार पर है तथा कुछ तो लुप्त हो गई हैं। वनों की कटाई से वैश्विक तापमान में वृद्धि होती है। बारिश भी अनियमित हो जाती है। इन सबके कारण 'ग्लोबल वार्मिंग' में इजाफा होता है। रेगिस्तान फैल रहा है। नदियों का पानी उथला कम, गहरा तथा प्रदूषित हो रहा है क्योंकि उनके किनारों और पहाड़ों पर पेड़ों की अंधाधुंध कटाई हो रही है। जंगल के लिए आदिवासियों का अस्तित्व आवश्यक है। जंगल का उपयोग कैसे करना है आदिवासियों को इसकी पूरी जानकारी रहती है क्योंकि वन संरक्षण के प्रति उनके मन में गहरा सम्मान होता है। पौधारोपण की कमी के कारण इस अनमोल प्राकृतिक संपत्ति का तेजी से क्षरण हो रहा है, जो जीवन और पर्यावरण के संतुलन को खराब कर रहा है। जंगल की कटाई के कारण जंगली जानवर गांवों में शरण ले रहे हैं।

जोधपुर के खेजडली गांव में 230 वर्ष पूर्व 363 लोगों ने पेड़ों को बचाने के लिए अपनी जान तक दे दी थी। तब से लेकर आज तक उस गांव में बलिदान दिवस मनाया जाता है। इसके तहत वहां मेला लगता है, जिसमें विश्नोई समाज के हजारों लोग शिरकत करते हैं तथा बलिदानियों को श्रद्धांजलि देते है।

वैसे भारत में कुछ साल पहले 'चिपको आंदोलन' काफी चर्चित हुआ था, जिसके अगुवा सुंदरलाल बहुगुणा थे। दरअसल, यह आंदोलन इसलिए प्रारम्भ किया गया था कि भारत के उत्तरी क्षेत्र में सरकार ने पेड़ों की अंधाधुंध कटाई प्रारम्भ कर दी थी। सुंदरलाल बहुगुणा ने सैकड़ों की संख्या में ग्रामीणों को एकत्र किया और इनमें से एक ग्रामीण एक पेड़ से चिपक गया ताकि उसे काटा न जा सके। इस आंदोलन को काफी सफलता मिली थी।

आधुनिक डेयरी तकनीक व पशु प्रबंधन सीखने का सशक्त मंच बना राष्ट्रीय डेयरी मेला

दूध उत्पादन और पनीर बनाने की प्रतियोगिताओं में महिलाओं ने दिखाया हुनर

आई.सी.ए.आर.-राष्ट्रीय डेयरी अनुसंधान संस्थान (एन.डी.आर.आई.) में आयोजित त्रि-दिवसीय 'राष्ट्रीय डेयरी मेला और कृषि एक्सपो' के दूसरे दिन डेयरी नवाचार, ग्रामीण कौशल और उद्यमिता का अनूठा संगम देखने को मिला। मेले में हज़ारों किसानों, छात्रों और पशु-पालकों ने आधुनिक डेयरी विज्ञान की बारीकियों को समझा।

संस्थान के निदेशक डॉ. धीर सिंह ने कहा कि यह मेला किसानों को उन्नत विज्ञान से जोड़ कर उनकी आय दोगुनी करने की दिशा में एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर साबित हो रहा है। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि, हरियाणा अनुसूचित जाति आयोग के उपाध्यक्ष विजेंद्र बड़गुर्जर ने डेयरी क्षेत्र में एन.डी.आर.आई. के योगदान की सराहना करते हुए कहा कि संस्थान के शोध और समर्पित प्रयास सीधे तौर पर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मज़बूत कर रहे हैं। उन्होंने विश्वास जताया कि यहां से सीखकर जाने वाले किसान अपनी डेयरी इकाइयों को नए आयाम देंगे। मेले के दौरान आयोजित दूध उत्पादन प्रतियोगिताओं में पशु-पालकों के कुशल प्रबंधन का परीक्षण किया गया, वहीं पशु सौंदर्य प्रतियोगिताओं में विभिन्न नस्लों के स्वास्थ्य और शारीरिक संरचना का प्रदर्शन आकर्षण का केन्द्र रहा। पनीर बनाने की प्रतियोगिता में ग्रामीण महिलाओं ने पारम्परिक और नवीन स्वादों का प्रदर्शन कर महिला उद्यमिता की मिसाल पेश की। स्कूली और कॉलेज के युवाओं के लिए आयोजित विशेष सत्रों में कृषि तकनीक, पोषण और डेयरी क्षेत्र में करियर के अवसरों की जानकारी दी गई।

किसान-वैज्ञानिक संवाद : समस्याओं का मिला समाधान

मेले के मुख्य आकर्षण 'किसान-वैज्ञानिक संवाद' में पशु नस्ल सुधार, चारा प्रबंधन और रोग नियंत्रण जैसे गंभीर विषयों पर चर्चा हुई। इसके साथ ही मत्स्य पालकों के लिए डेयरी फार्मिंग के साथ मछली पालन को एकीकृत करने के लाभ और तालाब प्रबंधन पर विशेष सत्र आयोजित किया गया। आयोजन सचिव डॉ. गोपाल सांखला ने कहा कि एन.डी.आर.आई. ज्ञान साझाकरण और नवाचार के माध्यम से ग्रामीण सशक्तिकरण के लिए पूरी तरह प्रतिबद्ध है।

 RNI Regd. No. PBBIL/25/A0210 Postage Registered No. PB/PTA/0339/2025-2027

16 मार्च से खुलेगा एशिया का सबसे बड़ा ट्यूलिप गार्डन

उद्यान में होगा 75 किस्मों के लगभग 1.8 मिलियन फूलों का प्रदर्शन

श्रीनगर में स्थित एशिया के सबसे बड़े इंदिरा गांधी मैमोरियल ट्यूलिप गार्डन को सोमवार 16 मार्च को पर्यटकों के लिए खोल दिया

जाएगा। इस संबंध में जानकारी देते हुए जम्मू-कश्मीर पुष्प कृषि विभाग के एक वरिष्ठ अधिकारी ने बताया कि इस वर्ष उद्यान 70-75 किस्मों के लगभग 1.8 मिलियन ट्यूलिप प्रदिर्शत करेगा। उल्लेखनीय है कि विश्व प्रसिद्ध डल झील के किनारे जबरवान पहाड़ी श्रृंखला की तलहटी में स्थित यह उद्यान पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र रहता है। पूर्व में मॉडल फ्लोरीकल्चर सैंटर नाम से विख्यात इंदिरा गांधी मैमोरियल ट्यूलिप गार्डन को एक ढलान वाली ज़मीन पर सीढ़ीदार तरीके से बनाया गया है। ट्यूलिप गार्डन में लगभग 75 प्रकार के ट्यूलिप के अलावा अन्य कई प्रकार के फूलों की कुल 46 किस्में हैं, जिनमें हाइसिंथ, डैफोडिल और रैनुनकुलस शामिल हैं। कश्मीर घाटी में फूलों की खेती और पर्यटन को बढ़ावा देने के उद्देश्य से वर्ष 2007 में इस उद्यान को खोला गया था।

रबी विपणन सीजन 2026–27 के दौरान

केंद्र सरकार 303 लाख टन गेहूं खरीदेगी

सरकार ने रबी विपणन सीजन 2026-27 (अप्रैल-मार्च) के दौरान 303 लाख टन गेहूं खरीदने का लक्ष्य तय किया है। उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय के अनुसार सरकार ने 779,000 टन मोटे अनाज, जिसमें बाजरा भी शामिल है, खरीदने का भी लक्ष्य तय किया है।

पिछले रबी विपणन सीजन 2025-26 में केंद्र सरकार ने गेहूं खरीदने का लक्ष्य 312.7 लाख टन का तय किया था, जिसे बाद में बढ़ाकर 332.7 लाख टन कर दिया गया था। इसके मुकाबले, सरकार ने किसानों से 300.35 लाख टन गेहूं की खरीद की थी।

केंद्र सरकार ने रबी विपणन सीजन 2026-27 के लिए गेहूं का न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) 2,585 रुपये प्रति क्विंटल तय किया हुआ है। हालांकि मध्य प्रदेश सरकार ने गेहूं उत्पादक किसानों को राहत देते हुए एम.एस.पी. पर 40 रुपये प्रति क्विंटल बोनस देने का फैसला किया है। अत: राज्य के किसानों से गेहूं की खरीद मध्य प्रदेश में 2,625 रुपये प्रति क्विंटल की दर से की जाएगी।

उधर राजस्थान सरकार ने भी रबी विपणन सीजन 2026-27 के लिए राज्य के गेहूं किसानों को 150 रुपये प्रति क्विंटल का बोनस देने की घोषणा की हुई है। अत: राजस्थान के किसानों से गेहूं की खरीद 2,735 रुपये प्रति क्विंटल की दर से की जायेगी।

प्रमुख गेहूं उत्पादक राज्यों पंजाब एवं हरियाणा तथा उत्तर प्रदेश में गेहूं की समर्थन मूल्य पर खरीद पहली अप्रैल से शुरू होगी, जबकि राजस्थान एवं मध्य प्रदेश से खरीद चालू महीने में शुरू हो जायेगी।

फसल वर्ष 2024-25 (जुलाई-जून) में देश में गेहूं का उत्पादन 117.9 मिलियन टन का हुआ टन था। चालू रबी में गेहूं की बुआई बढ़ी है तथा उत्पादक राज्यों में मौसम भी फसल के अनुकूल बना हुआ है ऐसे में उत्पादन पिछले साल की तुलना में बढ़ने की उम्मीद है। गेहूं खरीदने का समय आमतौर पर अप्रैल से जून के आखिर तक होता है।

कृषि मंत्रालय के अनुसार चालू रबी सीजन गेहूं की बुआई बढ़कर 334.17 लाख हेक्टेयर में हुई है, जबकि पिछले साल इस समय तक इसकी बुआई केवल 328.04 लाख हेक्टेयर में ही हुई थी।

गेहूं के खरीद का लक्ष्य अलग-अलग राज्यों के फूड सेक्रेटरी और भारतीय खाद्य निगम, एफसीआई के अधिकारियों की एक बैठक में तय किया गया। इस बैठक में अनाज की खरीद, पब्लिक डिस्ट्रीब्यूशन और स्टोरेज पर असर डालने वाले कई फैक्टर का भी रिव्यू किया गया।

सरकार ने 10 फीसदी तक टूटे हुए दानों वाले बेहतर चावल की सप्लाई के लिए पांच राज्यों में एक पायलट प्रोजेक्ट शुरू किया है। राज्यों से इसे लागू करने पर फीडबैक देने के लिए कहा गया है।

कश्मीर : बादाम के पेड़ों पर एक माह पहले फूल आ गए

किसानों के लिए 'खतरे की घंटी'

कश्मीर घाटी एक बार फिर जन्नत जैसी सज गई है। कश्मीर में आमतौर पर मार्च के अंत में आने वाला बसंत इस बार एक महीने पहले ही आ गया है। श्रीनगर के बादामवाड़ी बाग सहित पूरी घाटी में बादाम और सेब के सफेद-गुलाबी फूलों ने

नजारे को किसी खूबसूरत पेंटिंग में बदल दिया है। हालांकि, मौसम के इस मिजाज के दो अलग-अलग पहलू सामने आ रहे हैं। इस प्राकृतिक सुंदरता के बीच किसानों की चिंता काफी बढ़ गई है। मार्च की शुरूआत में ही तापमान 20-22 डिग्री सैल्सियस तक पहुंच गया है, जो सामान्य से 9-11 डिग्री अधिक है। इसी असामान्य गर्मी की वजह से फूल समय से पहले खिल गए हैं। किसानों को डर है कि अगर अचानक ठंड बढ़ी या बेमौसम बारिश हुई, तो सारे फूल झड़ जाएंगे और फसल को भारी नुकसान होगा। विशेषज्ञ इसे सेब और बादाम पर टिकी कश्मीर की ग्रामीण अर्थव्यवस्था के लिए 'जलवायु परिवर्तन' का एक खतरनाक संकेत मान रहे हैं।

कृषि एवं कृषि संबंधित विषयों पर आधुनिक जानकारी लेने हेतु पढ़ें

खेती संदेश

हिन्दी साप्ताहिक समाचार पत्र

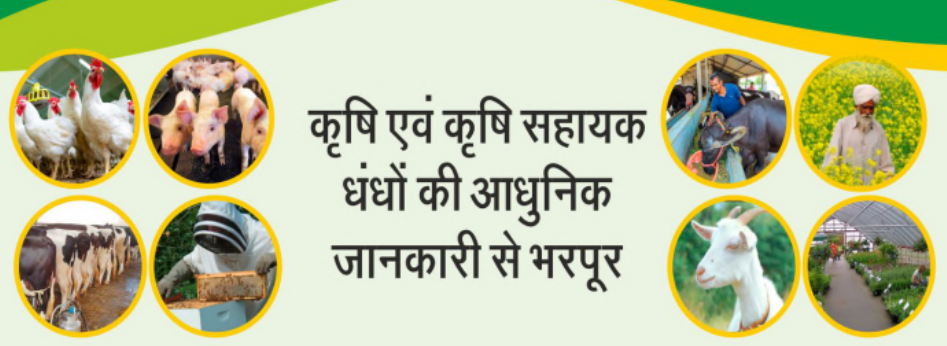

कृषि एवं कृषि सहायक धंधों की आधुनिक जानकारी से भरपूर

एक वर्ष में 52 अंक

किसान भाईयों व डीलर/डिस्ट्रीब्यूटरों के लिए

चंदों में विशेष छूट

एक वर्ष 250/- रुपए

दो वर्ष 450/- रुपए

KHETI DUNIYAN
TID - 62763351

चंदे भेजने हेतु QR कोड सकैन करें।

पेमेंट करने के पश्चात् अपना डाक पता इस नंबर पर भेजें :

90410-14575

खेती संदेश (कृषि साप्ताहिक)

के.डी. कॉम्पलैक्स, गऊशाला रोड, पटियाला